पीली साड़ी

लघुकथा संग्रह

कल्पना रामानी

आलोक प्रकाशन

पीली साड़ी

लघुकथा संग्रह

कल्पना रामानी

C - कल्पना रामानी 2018

आलोक प्रकाशन

कल्पना रामानी - संक्षिप्त परिचय

६ जून १९५१ को उज्जैन में जन्म. हाई स्कूल तक औपचारिक शिक्षा. कंप्यूटर से जुड़ने के बाद रचनात्मक सक्रियता. कहानियाँ, लघुकथाओं के अलावा गीत, गजल आदि छंद विधाओं में रुचि. लेखन की शुरुवात - सितम्बर २०११ से. रचनाएँ अनेक स्तरीय मुद्रित पत्र-पत्रिकाओं के साथ ही अंतर्जाल पर लगातार प्रकाशित होती रहती हैं. नवगीत संग्रह - "हौसलों के पंख" (२०१३-अंजुमन प्रकाशन), गीत - नवगीत- संग्रह - "खेतों ने ख़त लिखा" (२०१६-अयन प्रकाशन) एवं ग़ज़ल संग्रह - मैं 'ग़ज़ल कहती रहूँगी' (२०१६ अयन प्रकाशन) से प्रकाशित.

प्रथम नवगीत संग्रह पर नवांकुर पुरस्कार, कहानी प्रधान पत्रिका कथाबिम्ब में प्रकाशित कहानी 'कसाईखाना' पर कमलेश्वर स्मृति पुरस्कार, कहानी 'अपने-अपने हिस्से की धूप' को प्रतिलिपि कहानी प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार एवं लघुकथा 'दासता के दाग' को लघुकथा प्रतियोगिता में व्दितीय पुरस्कार प्राप्त.

वर्तमान में वेब पर प्रकाशित होने वाली पत्रिका - अभिव्यक्ति-अनुभूति (संपादक/पूर्णिमा वर्मन) के सह-संपादक पद पर कार्यरत.

अपनी बात

प्रिय पाठकों अभिवादन

कहानी संग्रह की ई बुक के बाद मेरा यह प्रथम लघुकथा संग्रह आपके सामने है.

मेरा करछी से कलम तक का सफ़र बहुत रोमांचक है, जिसे सिर्फ मैं ही महसूस कर सकती हूँ क्योंकि इसका एक-एक पल मैंने जिया है. उम्र के सातवें दशक में मैंने जिन विषमताओं में कंप्यूटर-ज्ञान हासिल करने के साथ ही इंटरनेट की दुनिया से केवल अच्छा साहित्य (उपन्यास, कहानियाँ, लघुकथाएँ आदि) पढ़ने के लिए कदम रखा, उन्हीं परिस्थितियों ने मेरे

कवि मन को साहित्य की सरस धारा में सराबोर करके रख दिया. शुरुआत तो गीत, ग़ज़ल, दोहे, कुण्डलिया आदि विविध छंद-रचनाओं से हुई और तीन संग्रह भी प्रकाशित हुए लेकिन फिर अचानक मन फिर से गद्य लेखन (कहानी, लघुकथा आदि) की ओर मुड़ गया और पठन-लेखन साथ साथ चल पड़े. मुझे विश्वास है कि ये लघुकथाएँ आपको अवश्य पसंद आएंगी और आप आगे भी मुझे प्रोत्साहित करते रहेंगे.

-कल्पना रामानी

१

पीली साड़ी

“क्या सोच रही हो वाणी अम्मा! अब तुम्हारा सुपुत्र नहीं आने वाला, यह चौथा बसंत है और उसने तुम्हारी सुध नहीं ली, क्या अब भी आस बाकी है”?

-क्यों नहीं, तुम शायद भूल गई हो, पिता की मृत्यु के बाद उनका विधि-पूर्वक क्रियाकर्म उसी ने आकर करवाया था और मुझे अकेली देखकर पूरी सुखसुविधा वाले इस आश्रम में भर्ती करके घर बेचकर सारा पैसा मेरे नाम जमा करके गया फिर हर बसंत पंचमी पर मिलने भी आता रहा।

“तुम्हें अकेली देखकर वो हमेशा के लिए स्वदेश वापस भी तो आ सकता था न”?

-जब भूल हमारी ही थी कि उसे विदेश की राह दिखाई और वहीँ विवाह करके बस जाने की सहर्ष अनुमति भी दी, फिर अपना कैरियर छोड़कर वापस कैसे आ जाता? ये चार साल तो...बच्चे छोटे थे न, समय ही नहीं मिला होगा।

“अपनों के लिए समय निकाला जाता है अम्मा, अपने आप कभी नहीं मिलता”

-देखो, अब उसका बेटा चार और बिटिया दो साल के हो चुके होंगे, इस बार वो ज़रूर आएगा।

“पर उसका कोई फोन भी तो नहीं आया, एक तुम हो कि इस दिन हर साल बच्चों के नाम का पौधा लगाकर उनके जीवन में सदैव बसंत बना रहने की लिए दुवाएँ माँगती हो”।

-यह तो मैं अपनी ख़ुशी के लिए करती हूँ री, माँ हूँ न... और इस दिन से मेरी यादें भी तो जुड़ी हुई हैं, भला उसके बचपन के वे दिन कैसे भूल सकती हूँ जब बसंत-पंचमी के दिन से पूरे एक माह तक मुझे हरी-पीली अलग-अलग डिजाइनों वाली साड़ियों में तैयार होते देखकर वो खुद भी वैसे ही रंग के वस्त्र पहनकर तितलियाँ पकड़ने, झूला झूलने, मेरे साथ बगीचे चला करता था। वो मुझे बहुत प्यार करता है, मेरे बिना उसे भी चैन नहीं होगा, हो सकता है वो मुझे सरप्राइज देना चाहता हो।

“ऐसा होता तो वो अब तक आ चुका होता अम्मा, मान जाओ कि अब वो अपने परिवार में व्यस्त होकर अपना फ़र्ज़ भूल चुका है, जल्दी से उठो और तैयार हो जाओ, बाहर पौधारोपण का कार्यक्रम शुरू होने वाला है, आश्रम की सेविका तुम्हें लेने आती ही होगी”

-ओह! शायद तुम सही कह रही हो... पर मुझे तो अपना फ़र्ज़ पूरा करना ही है...

और स्वयं से ही संवाद करती हुई वाणी अम्मा ने एक गहरी साँस के साथ कमरे की सिटकनी अन्दर से चढ़ाकर सामने ही रखी हुई आश्रम से मिली हरी किनारी वाली पीली साड़ी उठा ली

२

तकलीफ

सुबह-सुबह लान में टहलते हुए दिवाकर रॉय के मन में व्दंव्द छिड़ा हुआ था. पत्नी के निधन के बाद वो सारा व्यापार बेटे को सौंपकर अपना समय किसी तरह घर के छोटे-छोटे कार्यों व पोते-पोती के साथ खेलने बतियाने में काट रहे थे, लेकिन जब से डॉक्टर ने उसे एड्स से संक्रमित होना बताया है, बेटे-बहू का व्यवहार उसके प्रति बदल गया है. डॉक्टर के यह कहने के बावजूद कि –यह बीमारी लाइलाज ज़रूर है लेकिन छूत की नहीं, आप लोगों को अब इनका विशेष ध्यान रखना चाहिए..., वे उससे कन्नी काटने लगे हैं. बच्चों को उसके निकट तक नहीं फटकने दिया जाता. भोजन भी नौकर के हाथ कमरे में भिजवाया जाने लगा है. उसे अब अपनी मेहनत के बल पर खड़ा किया गया अपना साम्राज्य –बंगला, गाड़ी, नौकर-चाकर, बैंक बैलेंस आदि सब व्यर्थ लगने लगा है. टहलते-टहलते वो बेटे-बहू की मोटे परदे लगी हुई लान में खुलने वाली खिड़की के निकट से गुज़रे तो उनकी अस्फुट बातचीत में 'पिताजी' शब्द सुनकर वहीँ आड़ में खड़े होकर उनकी बातचीत सुनने लगे. बहू कह रही थी-

“देखो, पिताजी की बीमारी चाहे छूत की न भी हो लेकिन मैं परिवार के स्वास्थ्य के मामले में कोई रिस्क नहीं लेना चाहती, तुम्हें उनको अच्छे से वृद्धाश्रम में भर्ती करवा देना चाहिए, रुपए-पैसे की तो कोई कमी है नहीं और हम भी उनसे मिलने जाते रहेंगे.”

“सही कह रही हो, मैं आज ही उनसे बात करूँगा.”

दिवाकर के कान इसके आगे कुछ सुन नहीं सके, उनके घूमते हुए कदम शिथिल पड़ने लगे और वे कमरे में आकर निढाल होकर बिस्तर पर पड़ गए.

रात को भोजन के बाद बेटे ने जब नीची निगाहों से उनके कमरे में प्रवेश किया, वे एक दृढ़ निश्चय के साथ स्वयं को नई ज़िन्दगी के लिए तैयार कर चुके थे. बेटे को देखकर चौंकने का अभिनय करते हुए बोले-

“आओ विमल, कहो आज इधर कैसे चले आए, कुछ परेशान से दिख रहे हो, क्या बात है”?

“जी, मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ, सर झुकाए हुए ही विमल ने बुझे हुए से स्वर में कहा”.

“मुझे भी तुमसे कुछ कहना है बेटा, मैं तुम्हें बुलाने ही वाला था, अच्छा हुआ तुम स्वयं आ गए, बेफिक्र होकर अपनी बात कहो...”

“पहले आप अपनी बात कहिये पिताजी...” समीप ही पड़ी हुई कुर्सी पर बैठते हुए विमल बोला.

“बात यह है बेटे, कि डॉक्टर ने जब मेरी बीमारी लाइलाज बताई है तो मैं चाहता हूँ कि मैं अपना शेष जीवनकाल अपने जैसे असहाय, बेसहारा और अक्षम बुजुर्गों के साथ व्यतीत करूँ.” कहते हुए दिवाकर का गला रुँधने लगा.

सुनते ही विमल मन ही मन ख़ुशी से फूला न समाया, पिताजी ने स्वयं आगे रहकर उसे अपराध-बोध से मुक्त कर दिया था. लेकिन दिखावे के लिए उसने पिता से कहा-

“यह आप क्या कह रहे हैं पिताजी, आपको यहाँ रहने में क्या तकलीफ है?

“नहीं बेटे, मुझे यहाँ रहने में कोई तकलीफ नहीं लेकिन यह कहने में तकलीफ हो रही है कि तुम अब अपने रहने की व्यवस्था अन्यत्र कर लो, मैंने इस बँगले को वृद्धाश्रम का रूप देने का निर्णय लिया है, ताकि अपनी यादों और जड़ों से जुड़ा रहकर ज़िन्दगी जी सकूँ...और हाँ, तुम भी कुछ कहना चाहते थे न!...”

समाधान

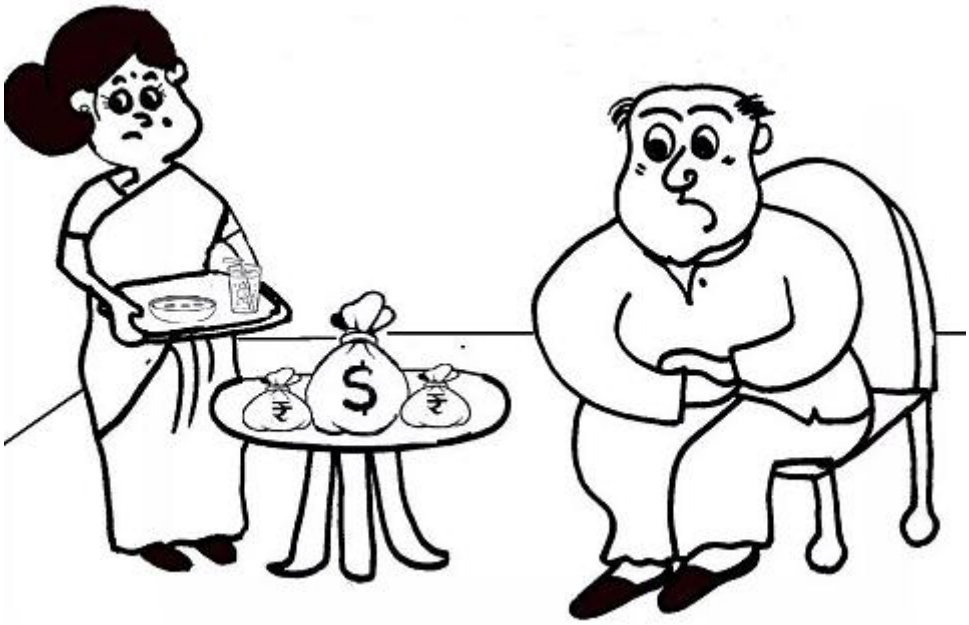

“पूरे तीन साल बाद हम भारत, अपने घर जा रहे हैं, न जाने माँ-पिता कैसे होंगे”। उत्साह से भरपूर देवांश ने जाने की तैयारियों में लगी दक्षा को संबोधित करते हुए कहा। अमेरिका में जॉब लगने के बाद उनको लगभग १० वर्ष हो चुके थे। इस बीच वे दो बच्चों के माँ-पिता भी बन गए। सात वर्षों तक तो वे हर साल भारत जाते रहते थे, लेकिन इस बार फासला लंबा हो गया था।

“ठीक ही होंगे, हर दिन तो फोन पर बातचीत होती ही है न।” दक्षा ने रूखा सा उत्तर दिया.

“मगर सामने देखने का आनंद ही और होता है डियर”,

वो बात तो है देव, लेकिन इस बार हम होटल में ही रुकेंगे, अब हमारे बच्चे भी घूमने लायक हो गए हैं तो मैं घर जाकर चूल्हे-चौके में नहीं उलझने वाली।

“यह कैसे हो सकता है दक्षा, कि माँ-पिता के होते हुए हम होटल में रहें? क्या तुम उनका अपनापन, वो सहयोग भूल गई हो, जब हर बार उन्होंने हमारे छोटे-छोटे बच्चों को सँभालकर हमें घूमने-फिरने की आज़ादी दी। अब तो समय आया है कि हम उनको भी घर से बाहर अपने साथ घूमने-फिरने ले जाएँ”।

दक्षा भला भारत जाने के वे शुरुवाती साल, जब बच्चे नहीं थे, कैसे भूल सकती थी कि वे जहाँ भी घूमने जाते, देवांश माँ-पिता को भी चिपकाकर चलते थे, लेकिन बाहर से बोली-
“इसके लिए मैं उनका आभार मानती हूँ देव, लेकिन इस बार हम पूरे एक महीने के लिए जा रहे हैं तो मैं वहाँ इत्मिनान से घूमना-फिरना चाहती हूँ। और हम माँ-पिता से मिलने जाते रहेंगे न प्लीज़...”

देवांश उलझन में पड़ गया। पत्नी को नाराज़ करके तो छुट्टियों का आनंद ही किरकिरा हो जाएगा और माँ-पिता को तो किसी हालत में नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

लेकिन समस्याएँ हैं तो समाधान भी मिल ही जाता है, उसने चुटकी बजाते हुए कहा-

“ठीक है डियर, मैं होटल में रहने की व्यवस्था करवा देता हूँ। अब ज़रा बाजार होकर आता हूँ उनके लिए कुछ सामान लेने हैं”।

हवाई जहाज़ के भारत-भूमि पर उतरते ही देवांश ने टैक्सी तय करके ड्राइवर को सीधे होटल चलने को कहा तो दक्षा ने मन ही मन स्वयं को दाद देते हुए कहा- “लो दक्षा, कितनी आसानी से तुमने सास-ससुर का पत्ता काट दिया।”

होटल पहुँचकर उसने चारों ओर नज़र दौड़ाई। देवांश ने उसे बताया कि उसने किचन, बैठक, और भोजन कक्ष के अलावा दो बेडरूम बुक किए हैं।

दक्षा हैरत में पड़कर बोली-

“लेकिन इतना सब हम क्या करेंगे देव, व्यर्थ ही खर्च बढ़ नहीं जाएगा”?

देवांश हँसते हुए बोला-

“यह नीचे वाला कमरा माँ-पिता के लिए है डियर, हम वहाँ रहने नहीं जा सकते, पर वे तो यहाँ आ सकते हैं न और अपनी इच्छा से हमारे साथ घूमने-फिरने के अलावा कुछ बना पका भी सकते हैं। तुम ऊपर जाकर कमरा सेट करो तब तक मैं उन्हें लेकर आता हूँ”।

४

मोह

“इतनी सारी सब्जियाँ! और ये मिठाइयाँ...क्या बात है जानेमन, फ्रिज को तो तुमने आज भंडार-गृह ही बना दिया है, मुँह में पानी आ गया”। सुबोध ने पत्नी सुजाता को खुले हुए फ्रिज के सामने विचारमग्न देखकर पूछा।

“कल अनुभव आ रहा है न, दुबई से पूरे एक साल के बाद”! कहते हुए सुजाता खुशी से फूली नहीं समा रही थी। इकलौता बेटा दुबई में एक अच्छी कंपनी में जॉब पा गया था और एक सप्ताह की छुट्टी पर भारत आ रहा था।

“फिर भला आज क्या खिला रही हो?”

“समझ में ही नहीं आ रहा, जिस सब्जी पर हाथ रखती हूँ, अनुभव की पसंद की निकलती है। सोचती हूँ आज कुछ दिन पहले के रखे हुए करेले ही बना लूँ”।

“लेकिन करेले तो मुझे भी पसंद नहीं।”

“आपके लिए पुदीने की चटनी के साथ आलू के पराँठे बना दूँगी”।

“नहीं करेले ही ठीक हैं, आलू के पराँठे तो अनुभव को भी बहुत पसंद हैं, कल सुबह ही तो वो पहुँच रहा है न, नाश्ते में बना देना”।

सुजाता दिन भर मन ही मन बेटे की पसंद का मेन्यू बनाती और रटती रही, कल ये सब्जी, परसों वो डिश, नरसों वो...इसी उथल-पुथल में रात में भी उसे ठीक से नींद नहीं आई।

सुबह तड़के ही पति-पत्नी उठ बैठे और चाय पीकर अनुभव का इंतज़ार करने लगे। फोन पर उसने कहा था मैं स्वयं ही आ जाऊँगा, सुबह-सुबह आपको एयर-पोर्ट आने में व्यर्थ परेशानी होगी। आखिर गेट पर एक टैक्सी रुकी और अनुभव ड्राइवर को पैसे देकर अंदर आ गया। माँ-पिता के चरण स्पर्श किए। दोनों ने भाव-विह्वल होकर उसे बारी-बारी गले लगाया। अनुभव ने बैग खोलकर माँ-पिता के लिए लाए हुए कपड़े व अन्य उपहार निकालकर उनको दिये फिर नहाने चला गया। सुजाता ने शीघ्रता से किचन का मोर्चा सँभाल लिया।

जब तक वो तैयार होकर आया, भोजन की मेज पर नाश्ता लग चुका था। अपनी पसंद के आलू के पराँठे और पुदीने की चटनी देखकर माँ से लिपटकर बोला- वाह माँ, मेरी पसंद तुम्हें अभी तक याद है...कहते हुए उसने खड़े-खड़े एक कौर तोड़कर खाया तो सुजाता ने टोका- अरे इस तरह खाया जाता है क्या, बैठकर आराम से खाओ, अभी तो बहुत कुछ आना है नाश्ते में...-

“बस माँ, आप व्यर्थ परेशान मत हो, मैं ज़रा जल्दी में हूँ, मेरी एक मित्र भी मेरे साथ भारत-भ्रमण के लिए आई है, उसे होटल में छोड़कर आया हूँ, वो मेरा नाश्ते पर इंतज़ार कर रही होगी। और हाँ...मैंने रहने के लिए होटल में ही कमरा बुक करवा लिया है। नैनी को अकेली नहीं छोड़

सकता, खाना भी घूमते हुए बाहर ही हो जाएगा, पर मिलने के लिए आता रहूँगा। कहकर उसने माँ-पिता का अभिवादन किया और बैग लेकर निकल गया।

सुजाता अचंभित सी अपने मन के पन्ने पर उकेरे हुए मेन्यू से ममता का पेपरवेट हटाकर पुत्र-मोह से मुक्त होने का प्रयास करने लगी।

५

विचित्र विरासत

आज सासु माँ की तेरहवीं है। मेहमानों के बीच उदासी ओढ़कर नकली आँसू बहाते हुए बहू संजना अब उकता गई थी। एक ननद को छोडकर बाकी सभी मेहमान जा चुके थे। अब उसे इंतज़ार था सास द्वारा विरासत में छोड़ी हुई चीज़ें देखने का... उनकी अलमारी की चाबी की जानकारी केवल ननद मीना को ही थी। उसने सबके सामने अलमारी खोली। सामने ही लॉकर की चाबी और एक कागज़ का पुर्जा पड़ा था। मीना ने माँ का लिखा हुआ संदेश पढ़ा. माँ ने अपने जेवर इकलौती पोती और बेटी के नाम किए थे, कैश रुपयों पर बेटे का अधिकार था. उनके सभी नए पुराने कपड़े गरीब महिलाओं में बाँट दिये जाने का ज़िक्र था। एक सीलबंद पैकेट था जिसके ऊपर एक पिन किए हुए कागज़ पर लिखा हुआ था-

“यह पैकेट बहू के लिए है लेकिन वो इसे अपने बेटे, मेरे पोते अनुज की शादी के एक वर्ष बाद ही खोल सकेगी। मेरी अंतिम इच्छा के अनुसार तब तक यह बैंक के लॉकर में रख दिया जाए”।

बेटे ने वह पैकेट बैंक के लॉकर में रखवा दिया। दिन गुजरते गए, छह महीने बाद अनुज की शादी हो गई, सगाई पहले ही हो चुकी थी। बहू आराधना के घर में आते ही संजना ने कुछ राहत महसूस की। अब वो अपना ध्यान अपने पति और अपने स्वास्थ्य पर ही देना चाहती थी। वह बात-बात पर बहू को निर्देश देती लेकिन आराधना उसके कहे को एक कान से सुनकर दूसरे से झटक देती। सास की कही हर बात का उलटा जवाब देती। धीरे-धीरे उसने सास को रसोई से बेदखल कर दिया।

समय गुज़रता रहा और संजना हालात से समझौता करती गई। अब पुराना संयुक्त परिवारों का ज़माना नहीं रहा, जब सास बहू पर हावी हुआ करती थी। आज की बहुएँ सास को अच्छा होने का मौका ही नहीं देतीं बल्कि ऐसा माहौल पैदा कर देती हैं जिससे उसे बुरा साबित किया जा सके और मौका मिलते ही पति को लेकर उड़ जाती हैं। गई सदी के इतिहास के वे पन्ने जब सास बहू पर हावी हुआ करती थी, आज की बहुओं ने फाड़कर फेंक ही दिये हैं, सास कितनी भी पढ़ी लिखी और समझदार हो लेकिन बहू स्वतंत्र ही रहना चाहती है और इसके लिए जाल बुनती ही रहती है और सास का नाम ही परिवार की सूची से मिटा देना चाहती है। उसने भी तो यही किया था न, अपनी सास सुमित्रा के साथ...! वे पढ़ी लिखी सुलझे विचारों की महिला थीं और अपनी पुराने विचारों की सास से मिले हुए कष्टों को भूलकर संजना को हर तरह की सुविधाएँ, सहयोग और प्यार देकर सास के नाम पर लगे मनहूस धब्बे को हमेशा के लिए मिटाकर नया इतिहास रचना चाहती थीं, लेकिन संजना क्षण भर भी खुशी न दे सकी थी उन्हें। आज उसे सास की बहुत याद आ रही थी, तभी सामने लगे कैलेंडर पर उसकी निगाह पड़ गई। दो दिन बाद ही बेटे बहू की शादी की पहली वर्षगाँठ है। सास की वसीयत के अनुसार एक साल पूरा हो चुका था। तीसरे दिन ही वो पति के साथ बैंक जाकर लॉकर

से अपने नाम का पैकेट निकलवा कर ले आई। मन में उथल पुथल मची हुई थी कि आखिर उसे सास ने क्या दिया होगा।

बेटे बहू और पति के इधर-उधर होते ही उसने वो पैकेट खोल दिया। अंदर सास के तह किए हुए लगभग एक दर्जन पुराने रूमाल थे और एक दूसरा पैक पैकेट भी था। देखकर अचानक उसकी आँखें एक सवाल लिए सिकुड़ गईं। साथ ही पिन किए हुए कागज़ पर लिखे शब्द पढ़ने लगी-

“बहू ये वे रूमाल हैं जिनसे मैं बेटे का विवाह होने के एक साल बाद से मृत्यु-पर्यंत आँसू पोंछती रही”।

पढ़कर उसकी आँखों से अविरल आँसू बहने लगे। रोते-रोते उसने दूसरा पैकेट खोला, उसमें उतने ही बिलकुल नए रुमाल थे और वैसा ही कागज़ का टुकड़ा पिन किया हुआ था- उसे कहीं से सास की आवाज़ सुनाई दी-

“बहू, रो रही हो न, ये रूमाल तुम्हें अपनी अंतिम साँस तक आँसू पोंछने के काम आएँगे”।

और उसने एक रूमाल उठाकर अपने आँसू पोंछ लिए।

६

युक्ति

सुमन ने जब से बिस्तर पकड़ा, उसकी जैसे दुनिया ही बदल गई। एक तो वृद्धावस्था, ऊपर से दमे की लाइलाज बीमारी। दिन रात खाँसती रहती। घर में बच्चे और बेटा चलते फिरते नज़र डाल दिया करते, बहू को उतना समय भी न था, आखिर घर की सारी जवाबदारी जो उसके ऊपर आ गई थी।

रुपए-पैसे की कोई कमी न थी लेकिन उसके साथ दो बातें करने वाला कोई न था। माँ की परेशानी को देखते हुए बेटे विनय ने उनकी सेवा के लिए एक सेविका रमिया को लगा दिया।

वो सुबह शाम दो-दो घंटे आकर सुमन के सारे कार्य कर दिया करती और फुर्सत पाकर बातें भी कर लेती। कुछ दिन तो सब ठीक ठाक चला फिर रमिया का व्यवहार बदलने लगा। बीच-बीच में उसे बहू बुला लेती तो दुविधा में पड़कर वो उसके काम जल्दी से जैसे-तैसे निपटाकर बहू के

पास चली जाती और उसके कार्य करने लगती, उसके बुलाए जाने पर सुनी-अनसुनी कर देती। शायद उसे काम छूट जाने का डर था। न कमरे की ठीक से सफाई हो रही थी न ही उसकी सेवा...कभी जग में पानी न होता तो कभी बिस्तर नहीं झटका जाता. कभी नाश्ता समय पर नहीं मिलता तो कभी कपड़े फैले हुए पड़े रहते. सुमन सोचा करती, जब तक गतिशील थी, तब तक उसका वर्चस्व भी कायम था "जिसके हाथ डोई, पूछे उसे हर कोई"। अब तो चुपचाप सहन करना ही अब उसकी नियति थी। वो बेटे को शिकायत करके परेशान नहीं करना चाहती थी, उसके पूछने पर सब ठीक होने की बात कह देती लेकिन विनय की गहरी नज़रें आते जाते माँ की परेशानी ताड़ लेतीं. एक महीना पूरा होने को आया तो विनय ने पत्नी से कहा-

"अनीता, मैं देख रहा हूँ कि माँ की सेवा ठीक से नहीं हो रही, हम किसी दूसरी सेविका को रख लें क्या?"

अनीता ठुमक कर बोली-

"सब ठीक तो है, माँ जी को रमिया का मेरे कार्यों में हाथ बँटाना नहीं सुहाता। फिर ऐसी भी न मिले तो...?"

विनय सोच में पड़ गया, आखिर पुरुषों का भी दो नावों पर पैर होता है। गृहस्थी में संतुलन बनाए रखने के लिए उनकी यही कोशिश रहती है कि लहरों में उफान न आने पाए वरना जीवन भर किनारा ढूँढते रहना पड़ता है। वो गरीबी के मनोविज्ञान से अच्छी तरह परिचित था अतः उसने युक्ति से काम लेते हुए माँ के पास जाकर उसे पैसे देते हुए कहा-

माँ कल रमिया को एक महीना पूरा हो जाएगा, तुम उसकी पगार समय पर दे देना।

सुमन आश्चर्य से बेटे को देखते हुए बोली- "घर के सारे हिसाब बहू देखती है तो मुझे इस झंझट में क्यों घसीट रहे हो बेटे?"

-पर माँ वो भी तो यह सब करते करते थक जाती होगी, इसमें कोई मेहनत तो है नहीं...कहते हुए अनीता पर नज़र डालकर विनय चला गया।

दूसरे दिन सुबह रमिया के आते ही सुमन ने उसे पगार देते हुए कमरे की ठीक से सफाई करने को कहा।

पैसे पाकर रमिया के चेहरे का रंग बदलने लगा, उसने उत्साह से सुमन के सारे कार्य किए, उसकी दुविधा खत्म हो चुकी थी और अब उसे काम छूटने का कोई डर न था। बेटे की युक्ति ने सुमन को तनावमुक्त कर दिया था।

७

कमाल है!

अपनी सहेली रीना से मिलने आई मीता सोफा पर बैठी ही थी कि एक छोटा सा सुंदर कुत्ता आकर उसके पैरों को चाटने लगा। मीता घबराकर उठ खड़ी हुई और उसे धकेलने लगी, लेकिन रीना के ‘नो जिमी, कम ऑन हियर’ कहते ही वो उसकी तरफ चला गया।

-कमाल है!...मीता बोल पड़ी

रीना खुशी से फूलकर कुप्पा हो गई और बताने लगी कि उसके प्रशिक्षण पर कितनी मेहनत और खर्च किया है। फिर कुत्ते की उपलब्धियाँ गिनाने लगी-

“गो देअर जिमी” ...कुत्ता रीना की इंगित दिशा में चला गया।

-कमाल है!

“टेक दिज़ जिमी”...कुत्ते ने खिलौना ले लिया।

-कमाल है!

लेकिन जब मीता ने कुत्ते को “इधर आओ जिमी” कहकर बुलाया तो वो चुपचाप बैठा रहा। उसने रीना से इसका कारण पूछा तो उसने गर्व से बताया कि हमने इसे अंग्रेज़ी में प्रशिक्षण दिलवाया है, तभी कुत्ता रसोई की तरफ देखते हुए भौंकने लगा।

“इसे अब भूख लगी है, खाना माँग रहा है”। हँसते हुए रीना ने घोषणा की।

-सचमुच कमाल है रीना! लेकिन यह तो खाना अपनी मातृभाषा में ही माँग रहा है, अगर अंग्रेज़ी में माँगता तो मैं भी तुम्हारे प्रशिक्षण का लोहा मान जाती!

८

सहेलियाँ

गहरे मेकअप और वज़नदार वस्त्राभूषणों से लदी-फँदी ये चारों सहेलियाँ वैसे तो मिलते ही चहकने लगती थीं और बातों से फुर्सत ही नहीं मिलती थी, लेकिन आज पास-पास बैठी होने के बावजूद इन्हें आपस में बातें करने की फुर्सत नहीं थी क्योंकि आज वे एक विवाह समारोह में शामिल होने के लिए आई थीं। लेकिन हाँ, बार-बार अपने पर्स से छोटा सा आइना निकालकर विभिन्न कोणों से खुद को निहारने के बाद कुछ सुनने की चाह में कनखियों से एक दूसरी को अवश्य देख लेती थीं।

९

टाट का पैबंद

“आहा! कितना शानदार भवन बनवाया है सुमि! आनंद आ गया... बहुत बहुत बधाई सखी...” गृहप्रवेश के अवसर पर न आ सकने पर खेद प्रगट करती हुई निर्मला बोली।

-कोई बात नहीं निम्मो, सबकी अपनी-अपनी व्यस्तताएँ होती हैं। कहते हुए सुमि ने निम्मो का हाथ अपने हाथ में लिया और बड़े उत्साह के साथ बातें करती हुई पूरा घर दिखाने लगी।

“सुमि, क्या तुमने जॉब छोड़ दिया है”? घर की साज सज्जा से प्रभावित निम्मो ने पूछा।

-नहीं तो...

“फिर इतने बड़े घर की साज-सज्जा, रख-रखाव पर कैसे ध्यान दे पाती हो”?

सुमन कुछ कहती उससे पहले ही निर्मला की नज़रें अचानक उसके शयनकक्ष की दीवार पर अटक गईं तो हैरत में पड़कर बोली-

“अरे सुमि, यह क्या, अपने शयनकक्ष में तुमने यह एक दराज वाला इतना छोटा सा दर्पण, क्यों लगा रखा है? क्या तुमने अलग से शृंगार-कक्ष नहीं बनवाया? इतने सुंदर घर में यह तो मखमल में टाट के पैबंद जैसा महसूस हो रहा है”

-इसमें हैरानी की कोई बात नहीं निम्मो, अगर यह टाट का पैबंद न होता तो क्या मेरा घर मखमल बना रह सकता था? चलो नाश्ता करते हैं...।

१०

गृह-प्रवेश

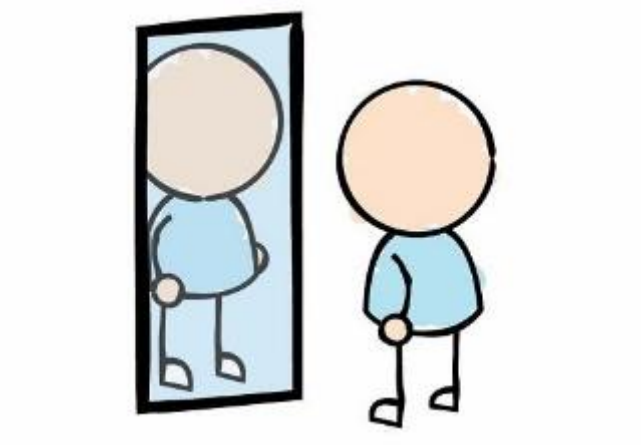

“मित्रवर! कल हमारे गृह-प्रवेश के शुभ अवसर पर आयोजित स्नेह-भोज में तुम्हारी सपरिवार उपस्थिति अनिवार्य है...” कहते हुए विमल ने एक सुंदर सा निमंत्रण-पत्र कमल की ओर बढ़ा दिया।

“अवश्य मित्र, तुम्हारी खुशी में शामिल होने मैं न आऊँ, यह कैसे हो सकता है?” मुस्कुराते हुए कमल ने उत्तर दिया।

एक ही दफ्तर में एक जैसे पद पर कार्यरत विमल और कमल में गाढ़ी मित्रता थी। दोनों के विचार काफी मिलते थे केवल एक ही बात पर मतभेद था-रिश्वत लेना... न लेना...।

अति सुंदर और सुसज्जित महलनुमा भवन के उदघाटन के बाद कमल ने नम्रतापूर्वक शुभकामनाओं के साथ लाए हुए उपहार का पैकेट विमल की ओर बढ़ाकर विदा ली।

उत्सुक विमल ने सबसे पहले उसी का उपहार खोला तो एक छोटा सा दमकता हुआ दर्पण देखकर उसका चमकता हुआ चेहरा विवर्ण हो गया।

११

चेहरा

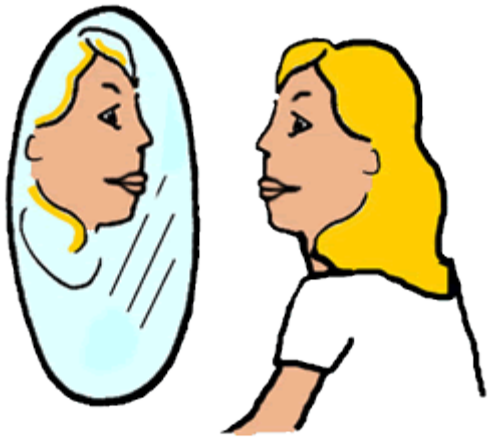

बार-बार समझाने के बावजूद जब विभा ने उसकी बात नहीं मानी तो जाने-माने साहित्यकारों के सम्मान समारोह में आमंत्रित प्रथम पंक्ति में अपनी सहेली के साथ बैठी हुई आभा अकेली ही उस मंच की ओर बढ़ गई जहाँ पीछे की तरफ कार्यक्रम के कार्यकर्ता साहित्यकारों को निर्धारित शुल्क पर हर श्रेणी के सम्मान बेचकर आगे मंचासीन करवा रहे थे। कुछ ही देर में आभा हाथ में श्रीफल, गले में गुलहार और कंधों पर शॉल लपेटे गर्व से सिर ऊँचा किए हुए ओजमय चेहरा लिए विभा के पास पहुँच गई लेकिन विभा ने उसे देखकर ऐसी मुखमुद्रा बनाई जैसे उसे पहचाना ही नहीं। वो विभा को झिंझोड़कर बोली-

"तुम्हें क्या हुआ सखी, देखा नहीं कि मेरा कितना सम्मान हुआ? इंटरव्यू, कविता पाठ की वीडियो रिकार्डिंग, आहा! मन को कितना सुकून पहुँचा, तुम भी चलती तो..."

विभा ने चुपचाप अपना बैग खोला और एक छोटा सा आईना निकालकर आभा के सामने करके बोली-

"यह क्या तुम्हारा ही चेहरा है आभा?"

१२

विरासत

"अरे कृपाराम तुम यहाँ?"

पुण्य लाभ की कामना से विद्याधर ने मंदिर की सीढ़ियों पर कतार में बैठे हुए भिखारियों के कटोरों में सिक्के डालते हुए जब अपने पुराने मित्र को वहाँ देखा तो उसके बढ़े हुए हाथ में अचानक ब्रेक लग गया।

प्रत्युत्तर में कृपाराम की आँखों से अविरल आँसुओं की धार बह निकली।

"बताओ कृपाराम! तुम्हारी यह दशा कैसे हुई? परिवार के सब लोग कहाँ हैं"?

आँसू पोंछते हुए कृपाराम बोला-

-क्या बताऊँ विद्या, तुम्हारे लाख समझाने के बावजूद मेरे स्वार्थी मन ने अपने पिता को वृद्धाश्रम में भर्ती करवा दिया था, लेकिन उन्होंने उस यातनागृह से जान बचाकर इन्हीं सीढ़ियों की शरण ली थी। एक बार देव दर्शन के विचार से मैं इस मंदिर की तरफ आया था तो दूर से ही पिताजी पर नज़र पड़ गई। उन्होंने मुझे नहीं देखा था, अतः मैं वहीं से वापस चला गया और फिर कभी इस तरफ नहीं आया। लेकिन अनजाने में वे मुझे यह विरासत सौंप गए।

१३

अन्नपूर्णा

उसकी अंतरात्मा चीख-चीख कर कह रही थी-

“अन्नपूर्णा, अगर इस अकाल के समय भी तुमने अपने संचित दानों का उपयोग नहीं किया तो तुम्हारे नाम की क्या सार्थकता?”।

और... अन्नपूर्णा ने नोट बंदी से व्यथित पति को आज ज़रूरी राशन न जुटा पाने के कारण चिंतित देखकर बरसों से उनकी नज़रें बचाकर छोटे नोटों और रेजगारी के रूप में रखी हुई अपनी सारी जमा-पूँजी उनको ही नज़र कर दी।

१४

वाह रे सपूत

रुक्मिणी देवी अपने ६ माह के पोते को गोद में लेकर बहला रही थी कि अचानक खाँसी का दौरा शुरू हो गया और वो बेदम होने लगी. आवाज़ सुनकर उनका बेटा विनय वहाँ आ गया और चिंतातुर स्वर में बोला-

“माँ, लगता है तुम्हारी खाँसी बहुत बढ़ गई है”.

सुनकर रुक्मिणी देवी की बुझी-बुझी आँखों में यह सोचकर चमक आ गई कि बेटे को आखिर मेरी सुध आ ही गई, मुश्किल से खाँसी रुकी तो बोली-

“हाँ बेटे, तुम देख ही रहे हो न तुमसे कितनी बार तो डॉक्टर को दिखाने के लिए कह चुकी हूँ. अब क्या बताऊँ, रात में पल भर भी नींद नहीं आती और खाँसते-खाँसते बिस्तर भी गीला हो जाता है.” शर्म को ताक पर रखकर रुक्मिणी देवी ने उम्मीद भरी निगाहों से बेटे की ओर देखा.

“तो माँ, अब तुम मुन्ने को गोद में मत लिया करो, इसके लिए आया है न!” कहते हुए विनय ने बड़ी बेशर्मी के साथ मुन्ने को माँ की गोद से खींच लिया.

१५

रोटी के लिए

“बेटे तनिक मेरी बात सुनो, ये दिन तुम्हारे स्कूल जाने के हैं, सुबह-सुबह यह कचरा बीनने का काम क्यों कर रहे हो?”

कंधे पर मैला सा झोला टाँगे, घूरे से कबाड़ छाँटते बालक को देखकर उस समाजसेवी के प्रातः-भ्रमण करते हुए पैरों को जैसे ब्रेक लग गया.

“स्कूल जाकर क्या करूँगा बाबूजी?”

“स्कूल जाओगे तो पढ़-लिख कर अच्छी कमाई के साथ अच्छे इंसान भी बन सकोगे.”

“क्या वहाँ रोटी भी मिलती है?”

“हाँ हाँ, तुम्हें वहाँ किताबें, कपड़े और भोजन भी मुफ्त मिलेगा.”

“फिर तो मुझे अभी स्कूल ले चलो बाबूजी, मेरी माँ बहुत बीमार है, दो दिन से काम पर नहीं गई तो घर में रोटी नहीं बनी, मैं अपनी माँ के लिए भी रोटी ले जाऊँगा” झोला वहीँ पटकते हुए बालक ने भोलेपन से कहा.”

१६

<u>लालच</u>

वह शिकारी बड़ी देर से आश्चर्यचकित होकर उस चिड़िया को देख रहा था जो उसके बिछाए जाल में दाने न चुगकर चारों तरफ घूम-घूम कर जाल के कोने चोंच से उठा-उठा कर कुछ दूरी पर अपने चूज़ों की तरफ देखती हुई चीं-चीं कर रही थी। शिकारी सिर्फ चिड़िया ही नहीं, उन चूज़ों को भी उदरस्थ करना चाहता था, अतः उसे इंतज़ार था कि कब वे चूज़े दाने चुगने आएँ और वो...

लेकिन यह क्या! अचानक चिड़िया उड़ी और शिकारी के कान में चोंच मारकर यह कहते हुए अपने चूज़ों के पास पहुँच गई कि- "मूर्ख शिकारी, मैं तुम्हारी लालची प्रवृत्ति को बहुत अच्छी तरह जानती हूँ, मैं तो अपने बच्चों को पेट भरने के लिए लालच में आकर जाल के पास न आने की हिदायत के साथ उन्हें अपनी सुरक्षा के गुर सिखा रही थी"।

१७

माँ के लिए

अपनी पत्नी व बच्चों के साथ दीपावली की ख़रीदारी के लिए कई घंटों से निकले परेश की नज़रें माल में अचानक कपड़ों के एक स्टाल पर टंगी हुई सुंदर सी साड़ी पर ठहर गईं। उसने पत्नी को आवाज़ देकर बुलाया और पूछा-

“सुधा डियर, यह साड़ी तुम्हारी माँ के ऊपर कैसी लगेगी”?

- अरे वाह! बहुत सुंदर साड़ी है, यह कलर तो ममा को बहुत पसंद है खूब फबेगा उनके ऊपर, लेकिन तुम उन्हें यह साड़ी किस अवसर पर देने वाले हो? उनसे मिले हुए भी काफी समय गुज़र गया है।

“लेकिन डियर! मैं यह साड़ी अपनी माँ के लिए खरीद रहा हूँ, बस ज़रा तय नहीं कर पा रहा था। अब जल्दी घर चलो वे इंतज़ार कर रही होंगी, उन्हें डॉक्टर के पास भी लेकर जाना है”।

१८

<u>तकिया</u>

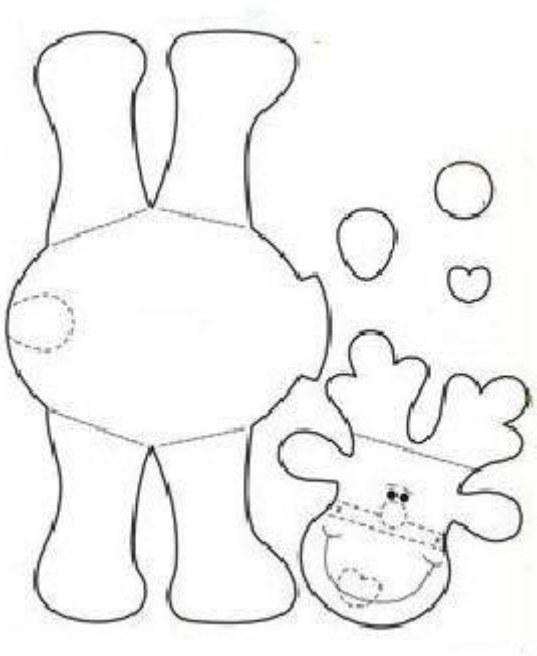

-माँ आज फिर?

“अरे सोनू! तुम तो खेलने गए थे न”? तकिये को टाँके लगाती हुई विमला ने पूछा

-हाँ माँ, मेरा मित्र आज नहीं आया तो मैं वापस आ गया लेकिन तुम मेरा तकिया जब तब खोलती क्यों रहती हो?

“बेटा कुछ ही दिनों में यह कठोर होने लगता है, इसलिए...”

-लेकिन माँ, यह कब तक करती रहोगी?

“जब तक तुम बड़े नहीं हो जाते बेटे, इसमें पड़ी हुई गुठलियाँ सीधी करते रहने से तुम्हें यह नरम लगेगा। मुझे इससे कोई तकलीफ नहीं होती बल्कि आत्मिक संतोष ही मिलता है। चलो भोजन कर लो”।

कहते हुए विमला ने तकिया एक तरफ रख दिया।

सोनू माँ को अपनी ६ वर्ष की उम्र से ही हर १५-२० दिन में अपने तकिये को खोलते और फिर सीते हुए देखता आया है। वो उस कोलोनी के एक दर्जी के यहाँ काम करती थी। सिलाई के बाद बची हुई कतरन घर ले आती और उसका तकिया फिर फिर भरकर नरम कर देती। सोनू अपने गरीब माँ-पिता का इकलौता बेटा है। पिता ने कभी कोई काम टिककर नहीं किया। दो चार दिन मज़दूरी कर भी लेता तो सारा रुपया दारू में ही उड़ा देता, माँ ही घर का खर्च किसी तरह चलाती आई है। सोनू की पढ़ाई में रुचि देखकर विमला ने उसे सरकारी स्कूल में भर्ती करवा दिया और उसे कभी फीस, किताबें या यूनिफॉर्म की कमी न होने दी।

हर पहली तारीख को पगार मिलते ही माँ बनिए का उधार चुकाकर अगले महीने का राशन ले आती। उस दिन पिता घर की चौखट पर डटे रहते और माँ के आते ही बचा पैसा किसी शिकारी बाज की तरह झपट लेते। विरोध करने पर घर से निकाल देने की धमकी देते। माँ मार खाती रहती मगर उस घर की चौखट नहीं छोड़ी। सोनू चुपचाप सब देखता रहता था, वो कभी नहीं जान सका कि उसकी पढ़ाई का खर्च कहाँ से आता है। पिता को तो अपने दारू के अलावा किसी बात से मतलब ही न था।

एक दिन वो माँ से अकेले में लिपटकर बोला-

-माँ, पिता तुम्हें पैसा न होने पर भी हर दिन पीटते और घर छोड़ने के लिए कहते हैं न...फिर तुम यह घर छोड़ क्यों नहीं देती? हम दोनों दूसरा घर लेकर रहेंगे।

“पहले तुम बड़े हो जाओ बेटे, अभी इन बातों को तुम नहीं समझोगे, यह दुनिया बड़ी ख़राब है, यहाँ से निकलकर हम अकेले सुरक्षित नहीं रह सकते”।

कहते हुए विमला ने अपने आँसू पोंछते हुए सोनू का गाल चूम लिया।

समय गुज़रता रहा और सोनू बड़ा होता गया, किशोरावस्था तक आते-आते उसका तकिया भी कुछ बड़ा और मोटा होता गया

लेकिन माँ को पिता द्वारा पीटा जाना और माँ का तकिये को खोलना-सीना बंद नहीं हुआ। अब वो काफी बातें बिना माँ से पूछे बिना समझने लगा था। उसे पिता द्वारा माँ की पिटाई असहनीय होने लगी थी।

ooo ooo ooo ooo

आज सोनू का ११ वीं कक्षा का आखिरी पेपर था, फिर स्कूल की छुट्टियाँ लग जाएँगी और उसके बाद परीक्षा के परिणाम का इंतज़ार ही करना है। उसे पूरा विश्वास था कि इस बार भी वो हमेशा की तरह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होगा। उसकी योग्यता और रुचि को देखते हुए वहाँ के प्राचार्य ने उसे आगे अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए उसी स्कूल में शिक्षक के रूप में अपनी सेवाएँ देने का प्रस्ताव रखा था। सुनकर उसे तो जैसे मुँह माँगी मुराद मिल गई थी, तंग हाली में न जाने कैसे माँ ने उसे यहाँ तक पढ़ाया।

रास्ते भर वो खुद को शिक्षक के रूप में देखता और सोचता हुआ चलता रहा। बीच में पड़ने वाली एक अच्छी सी कॉलोनी में छोटा सा मकान भी किराए पर तय कर लिया। आज उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि अब माँ को जल्लाद पिता से दूर ले जाएगा और नौकरी के झंझट से भी मुक्त कर देगा। उसे सुख चैन के तकिये पर सुलाएगा...

सोचते-सोचते घर आ गया, दरवाजा उड़का हुआ था लेकिन अंदर से पिता की ऊँची आवाज़ और माँ का रोना-गिड़गिड़ाना सुनकर वो वहीं रुक गया और दरार से झाँकने लगा। अंदर उसके उधड़े हुए तकिये को मजबूती से पकड़े हुए पिता चिल्ला रहे थे-

“तो तुम आज तक मेरी आँखों में धूल झोंकती रही, अपने पूत के लिए रुपयों से तकिया भरती रही और मुझे पैसे-पैसे के लिए मोहताज बना

दिया, अब इस तकिये पर मैं सोया करूँगा। आखिर पढ़-लिखकर तुम्हारे पूत ने कौनसे झंडे गाड़ दिये हैं?"।

सोनू सारी बातें पलक झपकते ही समझ गया। माँ रोते रोते तकिया छीनने का प्रयास कर रही थी, अचानक पिता को उसे मारने के लिए हाथ उठाते देखकर सोनू ने दरवाजे को ज़ोर का धक्का दिया और माँ-पिता के बीच में आकर पिता का वार अपने ऊपर झेल लिया फिर माँ का हाथ पकड़कर ऊँची आवाज़ में बोला-

-चलो माँ, मेरे साथ... मुझे अब इस तकिये की कोई आवश्यकता नहीं है।

१९

अपना खून

“किसका फोन था सोनल? अरे, यह तुम्हारा चेहरा क्यों उतरा हुआ है, क्या हुआ?” अखबार समेटकर रखते हुए विशाल ने पत्नी की ओर देखते हुए पूछा।

- पिताजी का फोन था विशु... भैया-भाभी उनको बहुत परेशान करने लगे हैं। उनकी किसी बात की वे परवा नहीं करते। माँ के बाद तो वे वैसे भी कितने अकेले हो गए हैं न, और अब...भाभी तो ठीक है, पराए घर की है लेकिन भैया को तो उनका खयाल रखना चाहिए न, वो तो उनका अपना खून है...रुआँसी आवाज़ में सोनल ने बताया।

“तुम बिलकुल सच कह रही हो सोनल, मैंने भी व्यर्थ पिताजी को तुम्हारे कहने में आकर वृद्धाश्रम पहुँचा दिया, आज ही उनको घर लेकर आता हूँ...” विशाल जैसे गहरी निद्रा से जागते हुए बोल उठा।

२०

नाखून

माँ, मेरी प्यारी माँ!

बहुत नाराज़ हो न! मुझे भी तुम्हारा इतना सुंदर दुपट्टा खराब हो जाने का बहुत दुख है, बस अब यह गरबा उत्सव निकल जाए फिर अपने ये लंबे नाखून काट दूँगी। मैं जानती हूँ माँ, तुम खुद को कभी नहीं बदल सकोगी। दिन भर दुपट्टा ओढ़े रखना...हुंह! कहते हुए नीलू शुभदा के गले से लिपट गई।

शुभदा की एक ही तो संतान है, प्यारी सी बेटी नीलू, जो अब १८ वर्ष की हो चुकी है, इसी साल से कॉलेज जाना शुरू किया है। मुंबई आए उन्हें दो साल ही हुए हैं। अमित के कंपनी जॉब के कारण गाँव छोड़कर शहर आ गए। यहाँ आकर बेटी को तो पहनने ओढ़ने और घूमने फिरने की पूरी

आज़ादी सौंप दी, लेकिन अपने बरसों के संस्कार कैसे भूलती? घर में तीन सदस्य हैं और सबका अलग-अलग मित्र वर्ग, दिन भर किसी न किसी का आना जाना लगा ही रहता है इसलिए वो सलवार सूट के साथ दुपट्टा ओढ़े रहती है, वैसे यहाँ आकर उसे बहुत सुकून मिला है।

साफ सुथरी लंबे परिसर में फैली टाउनशिप की २० इमारतों में से एक में उसका भी सुंदर सा फ्लैट है। पूरी सुरक्षा, हरियाली, स्वच्छ वातावरण, और साथ में अनेक सुविधाएँ। ५-५ इमारतों का समूह एक कॉलोनी का रूप ले लेता है जिसमें बगीचा, झूले, तरणताल, भ्रमण-पथ आदि अलग अलग हैं।

सुबह-शाम नीचे प्राकृतिक वातावरण में टहलते हुए उसका मन जैसे उड़ने लगता। तुलना करती तो गाँव का माहौल इसके सामने कहीं नहीं ठहरता। शुरू में अपनों से बिछड़ने का बहुत दुख था लेकिन यहाँ सबका अपना-अपना मित्र-वर्ग बन जाने से अच्छा लगता है। हर त्यौहार सब मिलकर ही मनाते हैं, और एक परिवार का ही बोध होता है। लेकिन एक टीस तो मन में उभरती ही थी कि काश, यह सब गाँव में होता!

बरसात अभी पूरी तरह विदा भी नहीं हुई कि दुर्गा-पूजा के साथ गरबा उत्सव की तैयारियाँ पूरी टाउनशिप में शुरू हो गईं। वैसे भी मुंबई की बारिश तो कभी बिना बुलाए मेहमान की तरह हाजिर हो जाती है, सो इसकी परवा न करते हुए हर इलाके में अंदर परिसर के अलावा बाहर भी खुले परिसर में झाँकियाँ सजने लगीं। रोज़ शाम को नीलू और शुभदा अपनी-अपनी मित्रों के साथ झाँकियाँ देखने निकल जातीं। नीलू का शौक देखते हुए शुभदा ने उसे गरबा-उत्सव के लिए लहँगा-चोली दिलाया। रात में देर तक सभी सहेलियाँ मिलकर नीचे हॉल में अभ्यास करतीं।

उत्सव शुरू हो गए। रात में नीलू अपनी सहेलियों के साथ गरबा खेलने जाती और शुभदा अमित के साथ हर परिसर में घूम-फिर कर आनंद लेती। नीलू और उसकी सहेलियों ने तय किया कि वे अंतिम दिन अपने परिसर के बाहर मैदान में सजी हुई माँ दुर्गा के भव्य झाँकी-स्थल पर

गरबा खेलने जाएँगी। वहाँ २४ घंटे सुरक्षा कर्मियों का सख्त पहरा रहता था, अतः सबको माँ-पिता की स्वीकृति भी मिल गई।

आखिर वो दिन आ गया। लहँगे चोली में तैयार नीलू अति सुंदर लग रह थी। वह बार-बार अपने रँगे हुए लंबे नाखून और मेहँदी से सजी हथेलियाँ देखती और स्वयं पर मुग्ध होती हुई सहेलियों के साथ गरबा-स्थल की ओर चल दी। उस दिन अमित ने आने में देर कर दी तो शुभदा अपनी सोसाइटी परिसर में ही घूम फिर कर लौट आई।

वहाँ कुछ देर गरबा खेलने के बाद नीलू थकान दूर करने के लिए सहेली के साथ खाद्य सामग्री से सजे स्टालों की ओर आ गई। कुछ नाश्ता करने के बाद जैसे ही वे पानी के लिए बाहर की तरफ पहुँचीं अचानक तेज़ हवा के साथ बारिश शुरू हो गई। "ओहो यह मुंबई की बारिश भी अजीब है, चाहे जब..." सोचते हुए दोनों सखियाँ पंडाल की ओर दौड़ पड़ीं। अचानक नीलू का पाँव अपने लंबे लहँगे में अटका और वह वहीं गिर गई। सहेली आगे निकल गई थी। हर तरफ अफरा तफरी मच गई थी। तभी एक गरबा खेलने आए उसी के सोसायटी के एक परिचित युवक ने उसकी उठने में सहायता की और बारिश से बचाकर एक तरफ आड़ में ले गया। उधर बारिश तेज़ हुई जा रही थी, इधर नीलू घबराहट के मारे परेशान। सहसा युवक ने एकांत पाकर उसे अपनी बाहों में कस लिया और बेतहाशा चूमने लगा। नीलू की साँस फूल गई। जितना छूटने का प्रयास करती, युवक उतनी ही मजबूती से जकड़ लेता। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छाने लगा, अनिष्ट की कल्पना मात्र से ही सिहर उठी। उसने मन ही मन माँ दुर्गा के नव रूपों का स्मरण करके उसके शक्ति रूप पर ध्यान केन्द्रित किया और युवक को गले से लिपटाकर उससे प्यार करने का अभिनय करने लगी। अँधेरे में युवक उसके मनोभावों को समझ न पाया, और... नीलू ने दोनों हाथों के नाखून तेज़ी से उसकी गर्दन में गड़ा दिये। युवक दर्द से बिलबिलाने लगा। बंधन ढीला होते ही नीलू दौड़ पड़ी। हाँफती-काँपती सीधी अपने फ्लैट के डोर पर ही रुकी और बेल को तब तक दबाए रखा जब तक घबराई हुई शुभदा ने आकर दरवाजा न खोला।

बेटी को बदहवास स्थिति में देखकर आशंकित हो उठी उसे गले से लगाकर पीठपर हाथ फेरने लगी। कुछ संयत होकर नीलू ने रोते रोते पूरी आपबीती सुना दी और कहा-"माँ आज अगर ये लंबे नाखून न होते तो तुम्हारी बेटी का न जाने क्या हश्र होता"। शुभदा ने भरे गले से कहा-

बेटी, आज माँ दुर्गा ने तेरी रक्षा की है, आज के बाद तुम्हें कभी नाखून काटने के लिए नहीं कहूँगी।

२१

फ़र्ज़ की डोर

सावन का महीना लगते ही मेघा के कानों में पड़ने वाली हर आवाज़ घुँघरुओं की रुनझुन में बदल जाती है और ज्यों ज्यों राखी पर्व निकट आने लगता है, यह आवाज़ तेज़ होती जाती है।

मेघा तीन भाई बहनों में सबसे बड़ी है। उससे ५ साल छोटी बहन मनीषा और १२ साल छोटा मनुज, जिसे प्यार से सब मुन्नू कहते हैं, जिसके लिए माँ के साथ-साथ उसने भी हर मंदिर में सिर नवाया, पीर पूजे, देव मनाए। आखिर उनकी मुराद पूरी हुई और बहनों के लिए प्यारा सा भाई आँगन की बहार बनकर आ गया। मुन्नू के जन्म के आठ महीने बाद ही सावन का महीना लग गया। मेघा की खुशी का ओर-छोर न था। उसने मन ही मन तय किया कि शहर के बाजार की सबसे सुंदर राखी मुन्नू के लिए लाएगी।

पर्व से १५ दिन पहले ही मेघा ने अपनी पहचान के एक दुकानदार को अपने मन की बात बताकर कहा कि उसे ऐसी राखी चाहिए जो बाजार में सबसे निराली हो। मेरा छोटा सा मुन्नू राखी बँधवाकर जब घुटनों-घुटनों

हाथ टेकता हुआ चले तो घुँघरुओं की आवाज़ आने लगे। दुकानदार ने मुस्कुराकर उसे आश्वस्त किया और कहा कि दो दिन बाद आकर अपनी राखी ले जाए। मेघा ये दो दिन जैसे-तैसे काटकर तीसरे दिन दुकान पर पहुँच गई। राखी देखकर तो उसकी बाँछें ही खिल गईं। रंगबिरंगी चौड़े पट्टे की सुंदर राखी में घुँघरू इस तरह टंके थे कि बच्चे को चुभने न पाएँ। खुश होकर उसने दुकानदार को राखी के मुँहमाँगे दाम देकर धन्यवाद कहा और घर आ गई। उसके बाद हर वर्ष वो अलग-अलग रंग और डिजाइन में घुँघरुओं वाली राखी बनवाकर मुन्नू को बाँधती।

यह पहला सावन था जब वह मुन्नू से दूर थी, उसका विवाह मायके के निकट के शहर में चार माह पहले ही हुआ था, उसकी सास और पति अनय खुले विचारों के तथा सहयोगी स्वभाव के थे, उसे अपने निर्णय खुद लेने की पूरी आज़ादी थी। रिवाज के अनुसार पहली राखी पर मायके से लेने भाई या पिता को आना था लेकिन मुन्नू अभी छोटा था और पिताजी का स्वास्थ्य अक्सर खराब रहता था, अतः उसने स्वयं ही एक दिन पहले पहुँचने की सूचना माँ-पिता को दे दी थी।

मेघा ने सुबह जल्दी उठकर घर के सारे काम निपटा कर टैक्सी वाले को आने के लिए फोन कर दिया और तैयार होने के लिए अलमारी से कपड़े निकाल ही रही थी कि सास की चीख सुनकर उस ओर भागी। देखा कि बाथरूम के फर्श पर पैर फिसलने से वे गिर गई थीं। मेघा ने जल्दी से उनको सहारा देकर उठाया और कमरे में ले गई। उनके पाँव में मोच आ गई थी और दर्द भी होने लगा था। उसने हल्दी-तेल गरम करके सास के पाँव पर लगाकर लिटा दिया। अब तो उसके सामने असमंजस की स्थिति बन गई। सास को इस हालत में छोडकर कैसे जाए? अनय कल ही अपनी बहन को लेने उसकी ससुराल चला गया था, और कल तक ही आ सकेगा। ममतामई सास ने कहा भी कि बेटी चली जाओ, चोट मामूली है, अनु आकर सँभाल लेगी। लेकिन ऐसा करने से पति के मन को ठेस पहुँचती, और वो भी सारी जवाबदारी ननद पर नहीं डालना चाहती थी। आखिर स्नेह की डोर पर फर्ज़ की डोर हावी होने लगी और भरी आँखों से उसने

फोन करके पिता को सारी स्थिति से अवगत करवाकर टैक्सी वाले को मना कर दिया।

रात में रोते-रोते कब उसकी आँख लग गई, पता ही नहीं चला। तड़के उठकर सारे कामों से निपटकर उसने अपना सामान वापस अलमारी में रखते हुए एक नज़र राखी को उदास मन से देखा। सहसा उसे लगा कि राखी बँधवाकर मुन्नू हाथ हिला-हिला कर दौड़ रहा है और घुँघरू बज रहे हैं। हैरानी से वो इधर उधर देखने लगी। आवाज़ तो घुँघरूओं की आ रही थी लेकिन यह डोर-बेल बज रही थी जो उसके ही कहने पर अनय ने घुँघरुओं की आवाज़ में सेट करवाई थी। दरवाजा खोला तो सामने पिताजी के साथ मुन्नू को देखकर आश्चर्य-चकित रह गई। पिता ने अंदर आते हुए ढेर सारे उपहारों के पैकेट मेघा के सामने रखते हुए कहा- "बेटी, सुबह से मुन्नू ने कुछ नहीं खाया, एक ही ज़िद कि दीदी से घुँघरुओं वाली राखी बँधवाकर ही कुछ खाएगा, तो मैंने आने का मन बनाया, सोचा इस बहाने समधन से मिलना भी हो जाएगा"। मेघा ने मुन्नू को गले लगा लिया, और दोनों के नैन सावन की झड़ी के साथ बरस पड़े।

२२

मातृ-मन

घर के तरह-तरह के कार्यों से थकी हारी विभा अपने अंतिम काम को अंजाम देने यानी छत से सूखे कपड़े उतारने पहुँची तो फिर वही कबूतर, पानी का भरा पात्र, बिखरे दाने और गंदगी का आलम देखकर आग बबूला हो गई। कल ही तो उसने पानी का पात्र खाली करके उल्टा करके रख दिया था और अपनी व्यस्तता का हवाला देकर सोनू को दाना-पानी रखने से मना कर दिया था। कपड़े उतारना छोड़ गुस्से में भरी हुई नीचे पहुँची और सोनू को चिल्ला-चिल्ला कर आवाज़ लगाने लगी।

लेकिन सोनू था कहाँ? अपनी कारस्तानी को अंजाम देकर यानी छत पर पाखियों के लिए दाने और पानी की व्यवस्था करके भोजन किए बिना ही बाहर भाग गया था। वो माँ के स्वभाव से परिचित था और जानता था कि माँ गुस्से में भरी हुई हो तो उसकी पिटाई भी हो सकती है और अगर उस समय नज़रों से ओझल हो जाए तो वही माँ चिंतातुर होकर उसे खोजती हुई मुहल्ला छान मारती है। उसके मिल जाने पर सारा रंज भूलकर उसे गले लगा लेती है, लेकिन कुछ ही देर बाद उसे दुखी मन से

छत पर ले जाकर दिखाती है कि पक्षियों द्वारा इतनी गंदगी फैलाने से उसका कितना काम बढ़ जाता है।

लेकिन बच्चे तो बच्चे ही होते हैं... आठ वर्षीय सोनू को दाने चुगते और नन्ही चोंच से पानी पीते हुए पक्षी देखना बहुत अच्छा लगता है। हर दिन माँ की बात मानने का वादा करके अगले दिन सारे उपदेश भूलकर फिर वही बात दोहराता रहता है। हारकर अर्चना ने पक्षियों के लिए दानों वाला डिब्बा गायब करने के साथ ही घर में दानों वाले अनाज- दाल, चावल आदि ऊँचाई पर रखने शुरू कर दिये और पानी रखने वाला बर्तन भी छत से हटाकर छिपा दिया। वो गंदगी से सख्त नफरत करती थी, फिर वो चाहे घर के किसी भी हिस्से में क्यों न हो। उसे स्वयं पर ही कोफ्त होने लगी कि क्यों उसने सोनू के प्यार भरे आग्रह पर पक्षियों के लिए दाना पानी छत पर रखना शुरू किया था?

अगले दिन वो विजयी मुस्कान लेकर जैसे ही कपड़े लेने छत पर पहुँची तो एक अलग ही नज़ारे पर उसकी नज़रें ठहर गईं। सोनू ने स्कूल से आते ही माँ की नज़र बचाकर अपनी खिलौने रखने वाली वाली प्लास्टिक की छोटी सी टोकरी खाली करके पानी भरकर रख दी थी और अपनी थाली की रोटी के टुकड़े वहाँ फैला दिये थे। पंछी अपना काम कर गए थे और सोनू भी बिना कुछ खाए नदारद! लेकिन आज अर्चना का मातृ-मन द्रवित हुए बिना नहीं रह सका। सोनू को मुहल्ले से खोजकर प्यार करके खाना खिलाया और उस बात का ज़िक्र तक नहीं किया। सोनू आश्चर्य चकित सोच में डूबा हुआ था कि यह जादू कैसे हुआ?

दूसरे दिन वो फिर अपने भोजन में से पूरियों के टुकड़े करके छत पर पहुँचा तो उसे यह देखकर आश्चर्य का एक और झटका लगा कि वहाँ एक बड़े से बर्तन में भरपूर पानी और ढेर सारे दाने बिखरे हुए थे। पाखियों की जैसे फौज एकत्र थी वहाँ। सोनू सब कुछ भूलकर यह अलौकिक नज़ारा निहारने में मग्न हो गया और समय का पता ही न चला। इस बार माँ

बड़े इत्मीनान से कपड़े लेने छत पर पहुँची तो सोनू को देखकर उसके चेहरे पर मुस्कुराहट दौड़ गई। वो जानती थी कि अब सोनू को कहीं खोजने नहीं जाना पड़ेगा। वो मुहल्ले में नहीं बल्कि यहीं मिलेगा और समय के इस बचे हुए टुकड़े में उसने छत की सफाई करवाना अपनी दिनचर्या में शामिल कर लिया।

२३

नेकी का नतीजा

“यहाँ क्यों खड़े हो बच्चे, तुम्हें क्या चाहिए?” कहते हुए गाँव के दो कमरों वाले उस एकमात्र सरकारी विद्या-मंदिर के एक मात्र शिक्षक रमाकांत ने सवालिया नज़रों से उस भिखारी से दिखने वाले बालक से पूछा।

“कुछ भोजन मिलेगा बाबूजी? सुबह से भूखा हूँ”। उसने सामने ही पाठशाला के आँगन में भोजन करते हुए बच्चों को देखते हुए कहा।

“देखो, अगर तुम यहाँ प्रतिदिन पढ़ने आओगे तो भोजन, कपड़े, किताबें, सब मुफ्त मिलेगा, तुम्हें भीख नहीं माँगनी चाहिए”।

“मैं पढ़ना चाहता हूँ बाबूजी लेकिन मेरा कोई घर नहीं है, भीख नहीं माँगूँगा तो खोली वाले ‘दादा’ को पैसे कहाँ से दूँगा और अगर एक दिन भी पैसे न दिये तो वो खूब पिटाई करेगा। अगर यहाँ मुझे काम मिल जाए तो मैं पढ़ाई के साथ-साथ वो भी कर लूँगा”।

रमाकांत सोच में पड़ गया। वो यहाँ सरकार की तरफ से शिक्षक के पद पर अनेक सालों से ईमानदारी और समर्पित भाव से कार्य कर रहा था। वो उस बालक की पढ़ने में रुचि देखकर सहायता तो करना चाहता था

लेकिन उसे कौनसा काम सौंपे जिससे उसकी समस्या हल हो जाए। हर काम के लिए कर्मचारी नियुक्त थे। सरकारी भुगतान से ही सारा खर्च चलता था और पूरा हिसाब वही रखता था। उसने बालक को साफ कपड़े पहनकर अगले दिन आने के लिए कहा।

"लेकिन बाबूजी साफ कपड़े 'दादा' नहीं पहनने देता। वो कहता है, कपड़े जितने गंदे और फटे-पुराने होंगे, भीख उतनी ही अधिक मिलेगी"।

"ठीक है, तुम यहाँ आकर कपड़े बदल लिया करना और जाते समय अपने कपड़े पहनकर जाया करना"।

बालक ने सहमति में सिर हिला दिया।

रमाकांत ने उसे विद्यालय के छोटे-मोटे कार्य सौंपकर उसके लिए दैनिक वेतन तय कर दिया। वो कक्षा शुरू होने से काफी पहले आकर उत्साहपूर्वक अपने कार्य पूरे कर लेता और कक्षा शुरू होते ही एक तरफ बैठकर चुपचाप मनोयोग से पढ़ाई करने लगा। समय बीतने लगा, लेकिन अच्छाई पर हमला करने के लिए बुराई तो ताक में रहती ही है... उस भिखारी बालक की विद्यालय में उपस्थिति न जाने कब, किसकी आँख की किरकिरी बन गई और...

आज के स्थानीय समाचार-पत्र में यह समाचार सुर्खियों में था-

"बाल-श्रम" कराने के आरोप में सरकारी विद्या-मंदिर का शिक्षक रमाकांत सेवा कार्य से निलम्बित"।

२४

दासता के दाग

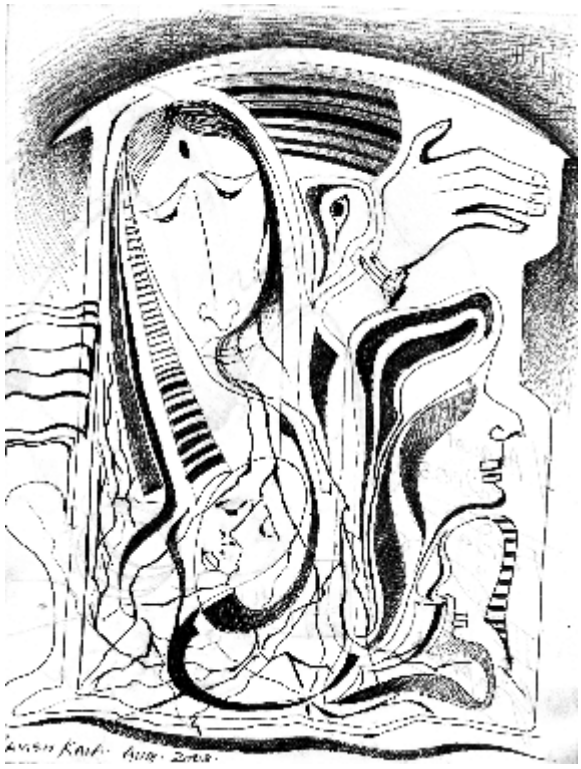

“मिनी बेटे जल्दी आ जाओ नाश्ता लगा दिया है...”

कहते हुए रवीना ने टेबल पर आलू-सैंडविच के साथ अलग-अलग दो प्रकार की चटनी की प्यालियाँ सजा दीं, अपनी सास सुवर्णा को उनके कमरे में नाश्ता देकर आई और पति असीम को भी आवाज़ लगाकर कुर्सी खींचकर बैठ गई।

असीम का सरकारी जॉब है और रवीना एक कॉनवेंट स्कूल में हिन्दी की शिक्षिका है। आज हिन्दी-दिवस है, रवीना सफ़ेद साड़ी और उसी के स्कूल की पहली कक्षा की छात्रा मिनी सफ़ेद यूनिफ़ोर्म में तैयार हुई थीं।

उसने मिनी को फिर से आवाज़ लगाई-

“बेटे जल्दी नाश्ता कर लो, आज थोड़ा जल्दी चलेंगे”।

-जी ममा, आती हूँ...

तभी असीम ने रवीना को टोक दिया- "रवीना, मैं तुम्हें कितनी बार समझा चुका हूँ, कि मिनी से अंग्रेजी में ही बात किया करो ताकि वो भी अंग्रेजी में जवाब दे सके. हिन्दी बोलने से उसका अंग्रेज़ी उच्चारण बिगड़ जाएगा"। कहते हुए असीम भी नाश्ते के लिए बैठ गया। पति की बात सुनते ही रवीना तैश में आकर बोली-

"देखिये, आप घर में उसे हिन्दी बोलने से नहीं रोक सकते। अंग्रेज़ी के लिए स्कूल परिसर ही काफी है"।

-देखो, मैं पहले भी कह चुका हूँ, मुझे उसे कूपमंडूक नहीं बनाना, नाश्ता करते हुए असीम बोला।

"और मैं उसे गुलाम पंख नहीं दे सकती..."

-समझने की कोशिश करो रवीना, यह उसके कैरियर का सवाल है।

"हिन्दी बोलने से कैरियर बिगड़ नहीं जाएगा असीम, आप अपनी ही मातृभाषा, राष्ट्रभाषा को हेय क्यों समझते हैं? आखिर कब तक हम इस तरह हिंदी का दमन करके अंग्रेजी को नमन करते रहेंगे?"

-मैं इस बारे में कुछ सुनना नहीं चाहता...और असीम गुस्से में नाश्ता छोड़ प्लेट को धक्का देकर उठ खड़ा हुआ... प्लेट चटनी की कटोरी से टकराई, और लुढ़कती हुई सामने बैठी रवीना की साड़ी पर चित्रकारी करती हुई नीचे जा गिरी। मिनी का सफ़ेद स्कर्ट भी छींटों से नहीं बच पाया। आवाज़ सुन सुवर्णा कमरे से बाहर आ गई तो देखा, बेटा जा चुका था और अपनी सफ़ेद साड़ी की दुर्दशा देखकर रवीना की आँखों से रुलाई फूटने को थी। अब वो क्या पहन कर स्कूल जाए..., हिंदी दिवस को भी आज सफ़ेद पोशाक के लिए नियत दिन को ही आना था. समय हो चुका

था कार्यक्रम भी शुरू होने वाला होगा। मिनी हक्की-बक्की सी बैठी रह गई थी। सुवर्णा ने सारी स्थिति भाँपकर कहा-

बेटी तुम दोनों कमरे में चलो, कपड़े बदलकर मुझे दे दो, मेरे अनुभूत नुस्खों से सामना होते ही सारे जिद्दी दाग दफा हो जाते हैं, यह कुछ भी नहीं, दस मिनिट देर हो भी गई तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

कुछ ही देर में सुवर्णा ने साड़ी और स्कर्ट को इस तरह बेदाग कर दिया मानों कुछ हुआ ही न हो और मुस्कुराते हुए रवीना को कपड़े देकर बोली-

"अब जल्दी से तैयार हो जाओ बेटी, अपना मन ख़राब मत करो"

"माँ जी, कपड़ों के ये दाग तो पलक झपकते ही दूर हो गए लेकिन क्या आपका कोई नुस्खा भारत माँ के आँचल पर अंग्रेजों के छोड़े हुए दासता के दाग मिटा पाएगा"?

२५

<u>ऐतराज़</u>

"एक बात बताइए योगिता जी, जब हमारी शादी तय होकर सगाई की रस्म भी पूरी हो चुकी है, तो फिर आपके माँ-पिता ने हमें बाहर घूमने जाने की अनुमति क्यों नहीं दी? अगर उन्हें अपने होने वाले दामाद पर विश्वास नहीं तो विवाह के बाद अपनी बेटी के भविष्य के प्रति वे आश्वस्त कैसे हो सकते हैं?"

-बात यह है नवीन जी, कि उन्होंने मेरे कहने पर ही हमें कहीं जाने की अनुमति नहीं दी. चूँकि इससे पहले मेरे दो रिश्ते टूट चुके हैं. दोनों बार ही सगाई की रस्म के बाद जब हमें एक साथ घूमने जाने की अनुमति मिली तो लड़कों ने घंटों बाहर रहने के बाद मुझे विश्वास में लेकर ऐसा प्रस्ताव रखा जिसके लिए मेरे संस्कार विवाह पूर्व अनुमति नहीं देते. अतः मैंने माँ को सब कुछ स्पष्ट बताते हुए निर्णय लिया कि मैं ऐसे लड़के से विवाह हरगिज़ नहीं करूँगी जो मॉडर्न-कल्चर की आड़ में मेरी भावनाओं को आहत करे. आप इस कमरे में जितनी देर चाहें बातें कर सकते हैं.

"ओह! सुनकर बहुत दुःख हुआ योगिता जी, लेकिन लड़के ही नहीं, आजकल लड़कियाँ भी मॉडर्न-कल्चर के रोग से अछूती नहीं हैं और माँ-पिता की छूट का नाजायज फायदा उठाती हैं. मैंने भी दो रिश्ते इस वजह से तोड़े कि सगाई के बाद घूमते हुए कार में ही लड़कियों ने आगे रहकर

अपने हाव-भाव से मुझे बहकाने का प्रयास किया. मुझे दिली प्रसन्नता है कि मेरा रिश्ता आप जैसी संस्कारवान लड़की से तय हुआ है.

क्या अब भी आपको मेरे साथ घूमने चलने पर ऐतराज़ है?"

२६

<u>प्रतियोगिता</u>

“सुन तो सुनन्दा…!”

-कहो प्रतिमा

“तुमने सूचना तो पढ़ ही ली होगी। युवा महिला-संघ द्वारा दिवाली पर हर साल होनेवाले आयोजनों में इस बार युवा महिलाओं के लिए रंगोली प्रतियोगिता रखी गई है, निर्णय के लिए पड़ोसी सोसाइटी के वरिष्ठ नागरिक संघ के सदस्यों को आमंत्रित किया जाएगा ताकि पक्षपात न हो। दस इमारतों में से एक-एक महिला का चुनाव होगा, हमें भी प्रतिभागियों में नाम लिखवाना चाहिए, कहीं मौका हाथ से न निकल जाए”

सोसाइटी की ये दो सखियाँ प्रातः भ्रमण के साथ बत-रस का मोह भी नहीं छोड़ पातीं। आसपास की इमारत में रहने वाली सुनन्दा और प्रतिमा पक्की सहेलियाँ हैं। प्रतिमा ने गति कुछ धीमी करते हुए कहा-

-सच कह रही हो प्रतिमा, हमें आज ही चलकर अपना नामांकन करवाना पड़ेगा। दस बजे मैनेजर अपने कक्ष में आ जाता है, हम वहीं मिलते हैं।

दस महिलाओं में उन दोनों का चुनाव भी प्रतियोगिता के लिए हो गया। सभी ने तय किया कि कल से ही अपने-अपने फ्लैट की देहरी पर अभ्यास शुरू कर देंगे।

अभ्यास शुरू हो गया। शाम को प्रतिमा और सुनन्दा एक दूसरे की रंगोली देखने जातीं। प्रतिमा ने गौर किया कि जिस सुनन्दा को ठीक से रंगोली बनाना आता ही नहीं था, न जाने कैसे सुंदरता से रंगों का संयोजन कर रही थी। आखिर उससे रहा न गया और एक दिन पूछ ही लिया-

"सुनन्दा, तुमने रंगों का इतना सुंदर संयोजन कहाँ से सीखा?"

-मैं तो तुम्हारी सासु माँ, सुषमा चाची से सीख रही हूँ प्रतिमा, उनको सुबह घूमते हुए देखा करती थी तो अनुरोध करके सिखाने के लिए कहा। तुम कितनी खुशनसीब हो जो इतनी हुनरमंद और मृदु-भाषी सास के सान्निध्य का सुख पा रही हो!

प्रतिमा सोच में पड़ गई। उसने तो सास को कभी कोई महत्व ही नहीं दिया, पति हमेशा हर बात में, रसोई हो या घर का रखरखाव, माँ की तारीफ करता रहता था, तो वह धीरे धीरे सुषमा को हाशिये पर धकेलती गई। सुषमा हर दिन सुबह नहा धोकर नियम से देहरी पर रंगोली माँडा करती थी, रसोई में भी उसका भरसक सहयोग करती लेकिन उसे अपनी सहेलियों जैसे आज़ाद रहना पसंद था जिनके परिवार गाँव में थे और वे पति-बच्चों के साथ स्वतंत्र थीं। मगर ससुर जी रहे नहीं और निखिल इकलौता बेटा है तो सास को साथ रखना उसकी मजबूरी थी। उसने मन ही मन कुछ निश्चय किया। कल अभ्यास का अंतिम दिन था, परसों सुबह प्रतियोगिता आरंभ हो जाएगी और उसी दिन शाम को सार्वजनिक सभा में पुरस्कार भी दिये जाएँगे। सुबह जैसे ही सुषमा नहा धोकर नीचे जाने लगी तो उसने बड़े अपनत्व से रोककर कहा-

"माँ जी, कल हमारी सोसायटी में रंगोली प्रतियोगिता है और मैं भी उसमें प्रतिभागी हूँ, लेकिन आज सिर में बहुत दर्द है तो अभ्यास नहीं कर

पाऊँगी। आज आप ही रंगोली बनाइये मैं आपको देखकर सीखने का प्रयास करूँगी"। भोली सुषमा आश्चर्य और खुशी से उसका मुँह देखने लगी, उसकी धुँधली आँखों में चमक आ गई, बोली- ठीक है बहू, आज घूमने नहीं जा रही। फिर उसने अपने पुराने सामान की पोटली से धूमिल पड़ी हुई रंगोली के नमूनों वाली पुरानी पुस्तिका निकली और देहरी पर मनोयोग से बनाने में जुट गई। उसने अपनी पूरी क्षमता लगा दी, दो घंटे रंगोली बनाने में लग गए प्रतिमा मुग्ध होकर ध्यान से देखती और समझती रही। आज तक इतना सुंदर नमूना उसने नहीं देखा था। रसोई में भी सुषमा ने सहायता की। दूसरे दिन सुबह सभी प्रतिभागी महिलाएँ अपनी अपनी इमारत के प्रवेश द्वार के एक तरफ रंगोली बनाने में जुट गईं। निर्णायक घूम-घूम कर आनंद लेते रहे। सभी अपनी-अपनी जीत को लेकर पूरी तरह आश्वस्त थीं। उस दिन घर पर रहकर भोजन सुषमा ने ही बनाया। दोपहर को भोजन करते हुए निखिल ने कहा-

"वाह! आज तो भोजन का अलग ही स्वाद है, बहुत दिनों के बाद इतना लज़ीज़ भोजन बना है, प्रतिमा!" निकट ही बैठी सुषमा ने इस उम्मीद के साथ नज़रें घुमाईं कि बहू उसकी तारीफ करेगी लेकिन वो तो पति से तारीफ सुनकर मुस्कुरा रही थी। सुषमा की आँखों की चमक फिर गायब हो गई, जैसे तैसे भोजन किया और वहाँ से उठ गई। शाम को सब तैयार होकर मुख्य सोसायटी के आयोजन वाले मुख्य हॉल में एकत्रित हुए। प्रतिमा भी पति और दोनों बच्चों के साथ चली गई लेकिन मन अशांत होने के कारण सुषमा नहीं गई। देर रात को जब सब लोग वापस आए तब तक सुषमा की आँख लग चुकी थी। दूसरे दिन धनतेरस थी। बहू सुबह से जल्दी-जल्दी सारे काम निपटाकर पति व बच्चों के साथ त्यौहार पर ख़रीदारी के लिए बाजार चली गई। शाम को जब सब दिया-बाती के समय लौटे तब तक सुषमा की आँख लग चुकी थी।

अचानक शोर से उसकी आँख खुली तो देखा सब उसके कमरे में एकत्रित हैं। बहू ने एक पैकेट सुषमा के हाथ में देकर पाँव छूते हुए कहा- माँ जी यह आपके लिए साड़ी और शॉल है, दिवाली पर आपको यही पहनकर पूजा

में शामिल होना है। मुझे रंगोली प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार मिला है और यह केवल आपके ही कारण संभव हुआ है। फिर पति की ओर मुड़कर कहने लगी-

“निखिल, माँ जी ने न केवल मुझे रंगोली की बारीकियाँ सिखाईं बल्कि कल दिन का भोजन भी बनाकर मुझे आराम दिया, अब मैं समझ चुकी हूँ कि घर में बड़ों का होना कितना महत्वपूर्ण है”।

निखिल ने मुसकुराते हुए कहा- अब समझ में आया ‘उस स्वाद’ का रहस्य!

बच्चे जो अपने लाए हुए सामान खोलने में व्यस्त थे, दादी का हाथ पकड़कर एक-एक करके उनको दिखाने लगे। सुषमा की धुँधली आँखों के सामने जैसे सैकड़ों दिये जगमगा उठे।

२७

स्वाद

गर्मी की एक शाम को रमा चौपाटी पर अपने पति अमित के साथ चाट का आनंद ले रही थी, तभी वहाँ एक ७-८ वर्षीय फटेहाल बालक आया और जूठी प्लेटों की ओर इशारा करके चाट वाले से बोला- “बाबूजी, ये प्लेटें धो दूँ? सुबह से भूखा हूँ लेकिन काम नहीं मिला”।

“नहीं मुझे आवश्यकता नहीं है बच्चे, आगे देखो…”

रमा ने बालक को चाट दिलानी चाही लेकिन उसने इंकार करते हुए कहा- “मैं भिखारी नहीं हूँ माँ जी”।

रमा कुछ कहती उससे पहले ही वो तेज़ी से अगले ठेले पर पहुँच चुका था। वो किंकर्तव्य विमूढ़ सी गरीबी और खुद्दारी का अनोखा गठबंधन देखती रह गई।

चाट वाले को पैसे देकर सामने ही आइसक्रीम-पार्लर पर पहुँचकर वे अपनी-अपनी मनपसंद आइसक्रीम का स्वाद लेने बाहर कुर्सियों पर बैठ

गए लेकिन रमा की नज़रें अब भी सामने उस बालक का पीछा कर रही थीं जो अब तक वैसे ही चाट वालों की उस लंबी कतार में एक के बाद एक ठेले से ठेला जा रहा था।

“आइसक्रीम पिघलती जा रही है रमा! कहाँ ध्यान है तुम्हारा”? अचानक पतिदेव की आवाज़ से वो चौंक गई और उस बालक की ओर इशारा करके बोली-

“देखो न अभी तक वो बालक भूखा फिर रहा है, कितने निर्दयी हैं ये ठेले वाले...पता नहीं उसका घर कहाँ है?”

“अरे क्या ठेले वालों की शामत आई है, जो उस बालक से काम करवाएँ...वो देखो क्या लिखा है.” कहते हुए अमित ने एक पोस्टर की ओर इशारा कर दिया जहाँ लिखा था- “बाल श्रम करवाना कानूनी अपराध है.”

“तो क्या अब वो यों ही भटकता रहेगा? उसके लिए कुछ तो सोचो न अमित प्लीज़...!”

अमित अपनी पत्नी की संवेदनशीलता से अच्छी तरह परिचित था, वो समझ गया अब ऐसे छुटकारा नहीं मिलने वाला, बोला-

“ठीक है तुम जल्दी आइसक्रीम समाप्त करो हम उसे समझाकर कुछ खिला-पिला देंगे और पूछकर उसके घर या फिर बाल-आश्रम में पहुँचा देंगे.”

सुनते ही रमा झट से अपनी आइसक्रीम फेंककर बोली- “चलो जल्दी, वैसे भी आज आइसक्रीम में स्वाद ही नहीं है.”

२८

दस्तखत

उस एकांत कक्ष में निर्णायक मंडल के जज और चार सदस्यों में मीटिंग चल रही थी.

आज यहाँ दो महीने पहले घोषित 'भारतीय संस्कृति बचाओ' विषय पर राष्ट्र-स्तरीय काव्य प्रतियोगिता का अंतिम निर्णय होना था. सदस्यों ने पूरे देश से आई हुई प्रविष्टियों का गहन अध्ययन करके उत्कृष्ट रचनाओं के रचनाकारों के नाम सहित सूची-पत्र तैयार कर लिये थे. सबने अपनी-अपनी पसंद के अनुसार रचनाओं को १० में अंक दिए थे. अब केवल पाँच सर्वोत्कृष्ट रचनाओं का चयन होना था. जिनके रचनाकारों को एक विशेष साहित्यिक समारोह में नगद पुरस्कार से सम्मानित किया जाना था.

अचानक जज साहब ने एक पुर्जा अपने बैग से निकालकर सामने टेबल पर फैला दिया और सदस्यों से कहा-

"एक बार अच्छी तरह सूची का निरीक्षण करके बताइये कि इन सदस्यों का नाम आपकी बनाई हुई सूची में है क्या, अगर है तो उनकी क्या पोज़ीशन है?"

चारों सदस्य सूची पर निगाह दौड़ाने लगे.

"इसमें से तो एक नाम भी हमारी सूची में नहीं है सर! लेकिन..." कहते हुए एक सदस्य ने सवालिया नज़रों से जज साहब की तरफ देखा.

“है तो गंभीर बात, लेकिन मजबूरी है... रात को ही मंत्रालय से काल किया गया कि पुरस्कार इन्हीं प्रतिभागियों को इसी क्रम में मिलना चाहिए. तो आप लोग अपनी-अपनी सूची में ये ५ नाम, रचनाओं के नाम सहित शामिल करके इसी क्रम से सर्वाधिक अंक देकर नई सूची बना लीजिये.”

तुरंत कंप्यूटर खटखटाने लगे और नए नामों की रचनाओं को खोजकर सामने लाया गया.

“देखिये सर, इन सबकी कविताएँ कितनी स्तरहीन हैं? इस समय हम निर्णायक के महत्वपूर्ण पद पर हैं, यह तो सरासर अंधेर है सर!” एक सदस्य ने डरते डरते कहा.

“आप इस बात की फ़िक्र मत कीजिये, मंत्रालय से जुड़ते ही रचनाओं का स्तर कई गुना बढ़ गया है.”

“मगर सर, यह होनहार प्रतिभाओं के साथ अन्याय और भारत की गौरवशाली संस्कृति का अपमान न होगा? क्या ऐसी प्रतियोगिताओं से नई पीढ़ी का विश्वास नहीं उठ जाएगा? मैं सम्बंधित उच्चाधिकारियों से फरियाद करूँगा.”

“ऐसे हर द्वार पर हम-आप जैसों के प्रवेश पर पहरा लगा होता है बंधु! अच्छा है, अपने चिंतन के द्वार बंद करके आप सब चुपचाप सूची-पत्र पर अपने-अपने दस्तखत कर दीजिये ताकि मैं फ़ाइनल एक्शन ले सकूँ.” कहते हुए जज साहब उठकर खड़े हो गए.

२९

<u>तीसरा रंग</u>

अनाथालय में पली बढ़ी साँवली-सलोनी कजली के तन का रंग जितना काला था, गुणों का रंग उतना ही उजला. ईश्वर ने उसमें गुण कूट-कूट कर भरे थे. इन्हीं गुणों के कारण ही उसके सास-ससुर ने उसे अपने बेटे विनोद के लिए पसंद किया था. उसकी आवारगी और उच्चश्रंखलता के कारण कोई भला इंसान अपनी बेटी उसके साथ ब्याहना पसंद नहीं करता था। विनोद कजली को बेहद प्यार करता था लेकिन केवल रात के समय, दिन में वो उससे बात करना तो दूर, नज़र उठाकर देखता तक न था। कजली को उसका यह व्यवहार किसी दोमुँहे साँप जैसा महसूस होता और वो तिलमिला कर रह जाती थी।

“विनोद, अभी हमारे विवाह को केवल ६ महीने ही हुए हैं और मैं देख रही हूँ कि तुम्हारा रंग आजकल बदलने लगा है। रात में तो तुम्हारा रंग और ही होता है, मैं तुम्हारी रानी, परी, हुस्न की मलिका और वगैरा, वगैरा होती हूँ...तुम मेरे बिना रह नहीं सकते...लेकिन दिन में... ”

विनोद की महिला मित्र के जाते ही कजली बिफरकर बोली। वो आए दिन उसकी महिला मित्रों को घर लाकर अपने सामने ही चुहलबाजी और छेड़छाड़ से खुद को अपमानित महसूस करने लगी थी।

“वो क्या है डियर कि, रात में तुम्हारा काला रंग नहीं दिखता न...लेकिन अब यह जान लो कि अगर मेरे साथ रहना है तो तुम्हें मेरे दोनों रंग स्वीकार करने होंगे। मैंने तुमसे विवाह केवल अपने माँ-पिता की सेवा करने के उद्देश्य से किया है, वे ही तुम्हारे गुणों पर रीझे थे।” विनोद ढिठाई के साथ बोला।

“कदापि नहीं, अगर ऐसा है तो मैं यहाँ से जा रही हूँ हमेशा के लिए... एक तीसरे रंग की तलाश में, जो मुझे अपने निश्छल प्रेम से सराबोर कर सके। मैं अनाथ, अबल ज़रूर हूँ लेकिन आत्मबल से वंचित नहीं...” कहते हुए कजली अपने सामान सहेजने लगी।

तभी अचानक कमरे का दरवाजा एक धक्के के साथ खुल गया और माँ ने अंदर आकर गरजते हुए कहा-

“मैंने तुम दोनों की सारी बातें सुन ली हैं। बहू, तुम कहीं नहीं जाओगी, तुम्हें वो तीसरा रंग भी विनोद में ही मिलेगा, मैं उसे जानती हूँ...। आज के बाद इस घर में उसके साथ कोई महिला मित्र नहीं आएगी...”

कहते हुए उसने विनोद की तरफ आशा भरी नज़रों से देखा, विनोद ने कजली की तरफ और कजली ने अपनी नज़रें झुका लीं.

३०

विमर्श

शाम को चाय का कप लेकर तनुजा लॉन में बैठी ही थी कि डोर-बेल बजी। कप रखकर उसने दरवाजा खोला तो बेटी तान्या के साथ आई हुई महिलाओं को देखकर सवालिया नज़रों से तान्या की ओर देखा-

“माँ, ये सब महिला-मुक्ति अभियान दल की सदस्य हैं, आपकी समस्या पर विमर्श के लिए मैंने इन्हें बुलाया है”।

आप इन सबकी आपबीती और मुक्ति के लिए संघर्ष की कथा सुनेंगी तो जान जाएँगी कि आज की नारी अबला या अशक्त नहीं रही जो पति का बेवजह अत्याचार सहन करती रहे”।

आज फिर माँ-पिता के कमरे से कहासुनी की ऊँची आवाज़ें आने के बाद पिता को बाहर जाते और माँ को गीले नैन पोंछते हुए उनकी युवा बेटी तान्या ने देख लिया था।

तनुजा ने सबको आदर से अंदर बिठाकर तान्या को चाय बनाने के लिए अंदर भेजा फिर महिलाओं की ओर मुखातिब होकर संयत स्वर में बोली -

“आप सभी बहनों का वार्ता के लिए हार्दिक स्वागत है लेकिन पहले मैं अपनी दो बातें आपके समक्ष रखूँगी। पहली यह कि मैं नारी के उस रूप की पक्षधर हूँ जो हर हाल में घर-परिवार तोड़ने नहीं जोड़ने में विश्वास और परिस्थितियों को अपने हौसलों से बस में करने की क्षमता रखती है। दूसरी यह कि अगर आप सब अपने मौजादा हालात से पूरी तरह संतुष्ट हैं तो मैं भी आपके इस अभियान में शामिल हो जाऊँगी”।

तनुजा की बातें सुनकर सभी महिलाओं की निगाहें आपस में विमर्श करने लग गईं।

३१

निरुत्तर

उस घुमावदार गुफानुमा बाजार से तगड़ी खरीदारी करने के बाद पसीने से लथपथ होतीं सुधा और सुरुचि बेहद थक चुकी थीं. प्यास से बेहाल होकर बाहर आकर इधर उधर नज़र दौड़ाई तो आसपास कोई होटल नज़र नहीं आया, न ही उनमें ढूँढने की शक्ति बाकी थी लेकिन सड़क के उस पार छाया में एक कतार में कुछ ठेलागाड़ियाँ देखकर गला तर करने की उम्मीद लिए फुर्ती से उधर पहुँच गईं. नींबू-पानी, जल-जीरा, लस्सी आदि ठन्डे पेय देखते हुए उनकी नज़रें नारियल-पानी के ठेले पर ठहर गईं. नारियल पानी पीते ही उनकी थकान दूर होने के साथ ही भूख प्यास दोनों से राहत मिल गई. पैसे देते-देते सुधा अपनी आदत के अनुसार नारियल वाले से जानकारी जुटाने लग गई-

"भैया, आप ये नारियल कैसे जुटाते हो और इतनी धूप में कितनी दूर से यहाँ तक ले आते हो?"

“ये बहुत मेहनत का काम है दीदी, लेकिन बचपन से करते-करते हम इसके आदी हो जाते हैं क्योंकि यही कार्य हमारी गुजर-बसर का सहारा है.”

“अगर आप बचपन में पढ़-लिख लेते तो यही कार्य बड़े पैमाने पर करके और अच्छी कमाई कर लेते और दिन-भर धूप में हलकान नहीं होना पड़ता!”

“छोड़ो सुधा, तुम भी न...भैंस के आगे बीन बजाने से बाज नहीं आओगी. पैसे दो और जल्दी चलो. पढ-लिख कर कमाने के लिए दिमाग भी तो चाहिए न...ये लोग ऐसे कामों के लिए ही बने होते हैं.” सुरुचि ने उसे टोकते हुए कहा.

नारियल वाले को सुरुचि की बातों से अपना अपमान महसूस हुआ, तुरंत बोला-

“आप ठीक कहती हैं बहन, लेकिन हम जैसों में इतना दिमाग होता तो ऐसे वीरान स्थलों पर चिलचिलाती धूप में आप जैसों की सेवा कौन करता?”

३२

गुलामी की गाँठ

सिर्फ १५ दिन शेष हैं 'हिन्दी दिवस' में... ।

उस मध्यमवर्गीय, लगभग दो हज़ार रहवासियों वाली सोसाइटी में सुरक्षा कर्मियों की गतिविधि बढ़ गई थी। इस बार संचालकों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन प्रस्तावित था। हर परिवार से कार्यक्रमों में हिस्सा लेने का आग्रह किया गया था। सारी व्यवस्था पर मैनेजर पूरी नज़र थी... और जैसा कि हमेशा होता था हर विशेष स्थान पर अंग्रेज़ी में सूचना-पट चिपका दिये गए। किसी भी गड़बड़ी की संभावना के मद्देनजर सुरक्षाकर्मी सूट-बूट और गले में कसी हुई टाई के साथ चाक-चौबन्द होकर निगरानी कर रहे थे। अचानक सुबह-सुबह एक सुरक्षाकर्मी की नज़र सूचना-पट पड़ी। किसी ने नीचे लिखा था-

"हम हिंदुस्तानी हैं, सब रहवासी हिन्दी अच्छी तरह समझते बोलते हैं जबकि अंग्रेज़ी बहुतों को नहीं आती फिर 'हिन्दी दिवस' पर कार्यक्रमों की

सूचना अंग्रेज़ी में क्यों? हम चाहते हैं कि आज के बाद हर सूचना हिन्दी में भी लिखी जाए"... -एक हिन्दी प्रेमी।

सोसाइटी के जो बुजुर्ग चाहते थे कि सूचनाएँ हिन्दी में भी लगाई जानी चाहिएँ, लेकिन नई पीढ़ी के दबाव के कारण कुछ कह पाने में खुद को असहाय महसूस करते थे, सूचना पढ़ते ही यह सोचकर खुशी से फूल उठे कि ऐसे समर्पित हिन्दी प्रेमियों के होते हिन्दी का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

लेकिन सुरक्षाकर्मी शंकित हो उठे। ५ वर्षों में ऐसा आज तक नहीं हुआ, फिर यह कौन है जो बिना नाम लिखे हमें धमकी दे रहा है। थे तो वे सब भी हिंदुस्तानी और हिन्दी बोलते समझते थे। लेकिन निर्णय लेना उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं था। बात मैनेजर तक पहुँचाई गई। उसने आदेश दिया कि रात की गश्त बढ़ा दी जाए और किसी तरह उस रहवासी को खोज निकाला जाए। अभी हिन्दी दिवस के कारण अतिरिक्त सुरक्षाकर्मियों को भी तैनात किया गया था। बुजुर्ग रामदीन को रात भर जागकर चौकसी करनी पड़ती थी। उसे कुछ और चौकस रहने के लिए कह दिया गया।

फिलहाल मैनेजर ने चालाकी से काम लेकर लिखवा दिया-"आपकी बात पर विचार किया जाएगा लेकिन आपको सामने आकर अपनी बात रखनी चाहिए" दूसरे दिन लिखा हुआ था, "आज के बाद अगर कोई सूचना हिन्दी में न हुई तो सूचनापत्र फाड़ दिये जाएँगे"। मैनेजर अकड़ू था और अंग्रेज़ी बोलने में अपनी शान समझता था, वो इस तरह हार क्यों मान लेता। सोचा किसी तरह यह समय निकल जाए । फिर सब गुबार शांत हो जाएगा। उसने तुरंत काँच के ढक्कन वाली पेटियाँ बनवाकर सूचनापत्रों पर ताले लगवा दिये। पर यह क्या? अगले ही दिन सभी पेटियों के काँच पर गहरा काला रंग पोत दिया गया था। मैनेजर को आग लग गई, वो किसी भी तरह उस व्यक्ति को पकड़ना चाहता था। आठ दिन बाकी बचे थे। कहीं रंग में भंग न हो जाए, यह सोचकर बहुत विचार के बाद मैनेजर ने

सहकर्मियों के साथ मिलकर योजना बनाई और दूसरे दिन ही सहमति की सूचना शांति के निवेदन के साथ हिन्दी में लगवा दी। पर्चे बँट चुके थे अतः कोई परेशानी नहीं आई।

आखिर हिन्दी-दिवस आया। सबने उत्साह के साथ कार्यक्रमों में हिस्सा लिया। सब कुछ आराम से सम्पन्न हो गया। अंतिम दिन मैनेजर ने अपनी योजनानुसार घोषणा की कि आज हम उस हिन्दी प्रेमी रहवासी का आभार मानकर धन्यवाद कहते हैं जिसने हमारी आँखें खोल दीं। कृपया वो सज्जन आगे आए, हम उसे इस शुभ अवसर पर सम्मानित करना चाहते हैं। जन समुदाय में सन्नाटा छा गया, सब लोग इधर-उधर देखने लगे। तभी सहसा वृद्ध रामदीन गर्दन झुकाए हाथ जोड़े मैनेजर के सामने आकर खड़ा हो गया। सब हैरानी से उसे देखने लगे। मैनेजर अवाक् रह गया। अब तो सबके सामने उसकी इज्ज़त का सवाल था। पूरा सुरक्षा-अमला रामदीन का आदर करता था। आखिर उसने अपनी हार मानते हुए रामदीन को गले लगा लिया। यह देखकर सभी सुरक्षाकर्मी, जो मन से यही चाहते थे, अपने गले की 'गुलामी की गाँठ' को ढीला करते हुए रामदीन को बधाई देने लगे फिर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच उसे सम्मानित किया गया।

सबसे पहले हिन्दी

“माँ, हम मूवी देखने जा रहे हैं, रात का खाना भी बाहर ही खाकर आएँगे, गुड़िया सो रही है, जाग जाए तो उसे ज़रा बहला देना”

कहते हुए अतुल ने अचला की ओर देखा। अचला ने मुस्कुराकर हामी भर दी। बेटे की कल छुट्टी है तो एक दिन बहू के साथ घूमना फिरना हो जाता है। अचला को बाहर का खाना नहीं रुचता और बढ़ती उम्र में घूमने या मूवी देखने का भी कोई शौक नहीं तो वो कहीं बेटे-बहू के साथ नहीं जाती। वैसे तो वे अपनी तीन वर्षीया पुत्री गुड़िया को साथ ही ले जाते हैं, अचला को परेशान नहीं करना चाहते, लेकिन वो अभी तक उठी नहीं थी तो सोचा माँ बहला लेगी।

उसने गुड़िया के जागने से पहले ही अपने लिए दलिया बना लिया और बालकनी में टहलने लगी। कुछ देर में ही गुड़िया जाग गई और माँ को न देखकर रोने लगी। दादी उसे बहलाने में जुट गई।

“चुप हो जा बिटिया, ममा आपके लिए टॉफी लेने गई है, आती ही होगी” लेकिन चुप होने के बजाय वो और ज़ोर से रोने लगी।

हड्डियों के दर्द के कारण अचला उसे गोद में नहीं उठा सकती थी, वहीं नेपकिन गीली करके आई और पास ही बैठकर उसका मुँह पोंछा और प्यार से सहलाने लगी। उसके खिलौने लाकर सामने रख दिये तो धीरे-धीरे गुड़िया चुप हो गई। उसके चुप होते ही अचला झट से उठकर दूध गरम करके ले आई और उसे पिलाने लगी। लेकिन गुड़िया मचलते हुए बोली- दादी बनाना...

“क्या बनाना बेटा, पहले दूध पी लो फिर आप जो कहोगी हम बनाएँगे।”

-दूद नईं... बनाना...

अचला एक कटोरी में दलिया ले आई और चम्मच देकर बोली-

“लो बेटी दलिया बनाओ और खाओ”।

गुड़िया ने मचलते हुए कटोरी दूर ठेल दी और फिर ‘बनाना’ की रट लगाने लगी

अचला परेशान हो गई, न जाने इसे क्या बनाना है, फिर कुछ सोचकर थोड़ा आटा गूँथकर लोई और खिलौना बेलन-चकला लाकर नीचे दरी बिछा दी और गुड़िया को बिस्तर से उतारकर कहा-

“लो बेटी आप रोटी बनाओ...ऐसे...फिर हम खाएँगे”

गुड़िया खुश होकर व्यस्त हो गई तो अचला फिर से दूध लाकर उसे पीने के लिए मनाने लगी।

लेकिन गुड़िया ने दूध न लेते हुए बेलन-चकला, भी परे धकेल दिया और फिर से ‘बनाना...’ की रट लगाने लगी

अचला ने हैरान होकर बेटे को फोन करना चाहा लेकिन उसकी मोबाइल का स्विच ऑफ था। क्या करे, बच्ची को कैसे चुप कराए...कपड़ों की कतरन लाकर दी कि वो गुड़िया बनाए, कागज़ लाकर दिये कि वो नाव बनाए लेकिन गुड़िया ने 'बनाना' की रट नहीं छोड़ी। अचला का पहली बार बाल-हठ से सामना हुआ था। सोचा, नीचे बगीचे में ले जाऊँ, बच्चों को देखकर शायद ज़िद भूल जाए। बोली- "बेटा चलो हम झूला झूलेंगे"।

गुड़िया खुश हो गई, नीचे जाते ही वो बच्चों के साथ मस्ती करने लगी, फिर झूले में बैठ गई। समय काफी हो चुका था, गुड़िया ने न दूध पिया था न ही कुछ खाया था, अचला को चिंता सताने लगी, बेटे-बहू को लौटने में देर हो सकती है, क्या करे। अँधेरा होने लगा तो गुड़िया को वापस ऊपर ले आई। फिर से दलिया परोसकर ले आई कि शायद बच्ची मेरे साथ कुछ खा ले लेकिन नहीं, दलिया देखते ही गुड़िया फिर 'बनाना' की रट लगाते हुए रोने लगी। फिर रोते रोते ही उसे नींद आ गई। अचला से भी कुछ नहीं खाया गया वो बेटे बहू का इंतज़ार करने लगी। कुछ देर बाद वे लौटे तो अचला ने एक अपराधिनी की तरह पूरा किस्सा बयान किया।

सुनते ही बेटा तो हँसी से लोटपोट हो गया लेकिन बहू ने दौड़कर गुड़िया को भूखी जानकर उठा दिया और बेतहाशा चूमने लगी, गुड़िया नींद में ही बनाना...बनाना...टेरती रही। बेटे ने पत्नी की ओर मुखातिब होकर कहा-

"रीना, कल तुम फल सब्जियों के नामों वाली हिन्दी-अंग्रेज़ी की सचित्र किताब माँ के लिए ले आना, उनको कुछ तो अँग्रेजी का ज्ञान होना चाहिए न..."

रीना तुनककर बोली- किताब आएगी लेकिन माँ जी के लिए नहीं, गुड़िया के लिए- मुझे अपनी बच्ची पर इस उम्र में अंग्रेज़ी नहीं लादनी...वो सबसे पहले हिन्दी सीखेगी।

३४

<u>तमन्ना</u>

तमन्ना ने जब से माँ से सुना कि ३१ दिसंबर को वे सब नए साल का स्वागत करने क्लब जाने वाले हैं तो वो हर दिन कैलेंडर लेकर उलझी रहती और बेसब्री से ३१ दिसंबर का इंतज़ार करने लगी। आखिर वो दिन आ ही गया और वो नई ड्रेस में तैयार होकर माँ-पिता के साथ क्लब पहुँच गई। तरुणा ने अपनी ६ वर्षीय बिटिया को पोशाक ही ऐसी दिलाई थी कि वो किसी राजकुमारी से कम नहीं लग रही थी। क्लब की सजावट देखकर तो वो दंग रह गई। मुख्य द्वार खुशबूदार फूलों से सजाया गया था। एक खुले मैदान में कार्यक्रम की व्यवस्था की गई थी। सामने ही बड़ी सी घड़ी टँगी हुई थी। पूरा मैदान दूधिया रोशनी, रंगीन पन्नियों और गुब्बारों से सुसज्जित था। म्यूज़िक गूँज रहा था। खाने पीने की चीजों के स्टाल लगे हुए थे। कुछ लोग, कुर्सियों पर बैठे थे तो कुछ स्टेज पर डांस कर रहे थे। वो भी माँ-पिता के साथ कुर्सी पर बैठ गई। तरह तरह के गेम खेले जा रहे थे। तमन्ना सब कुछ विस्मित सी देखती रही, आखिर १० बजते-बजते वो ऊबने लगी और माँ से पूछा-

“नया साल कब आएगा माँ? मैं भी उसका स्वागत करूँगी”।

“बस बेटा थोड़ी ही देर में जब वो बड़ा काँटा सबसे ऊपर १२ पर आ जाएगा बेटी...”। माँ ने घड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा।

तमन्ना कुर्सी पर बैठे-बैठे लगातार मुख्य द्वार की ओर देखती रही फिर ऊँघने लगी और उसे नींद आ गई अचानक १२ बजे शोरगुल और आतिशबाज़ी की आवाज़ें गूँजीं तो वो उठ गई और माँ से पूछा-

“नया साल आ गया क्या माँ”?

“हाँ बेटी, अब हम खाना खाकर घर चलेंगे”।
“पर माँ वो है कहाँ? मैं उसका स्वागत करूँगी”।

तरुणा मुस्कुराते हुए बोली-

“बेटी, नया साल कोई मनुष्य नहीं होता, पुराना साल समाप्त होते ही नया लग जाता है। आज के बाद घर में हम नया कैलेंडर लगाएँगे”।

सुनकर तमन्ना उदास हो गई। बुझे मन से थोड़ा सा खाना खाया और घर आकर अपने कमरे में कंधे से लटका हुआ बोतल व नैपकिन वाला छोटा सा बैग उतारकर पटका फिर उसी ड्रेस में सो गई।

सुबह वो बड़ी देर तक सोई रही। तरुणा ने उसके कमरे में जाकर जब उसके बैग से बोतल और नैपकिन निकाले तो उसे उसमें कुछ और भी होने का एहसास हुआ। देखा तो उसके अंदर एक छोटी सी मुरझाए फूलों की माला थी जो पतले से धागे में पिरोई गई थी।

तरुणा ने अपनी बगिया के फूल पहचान लिए और वस्तुस्थिति समझने में उसे देर न लगी। न जाने कब बिटिया ने उसकी नज़र बचाकर नए वर्ष के स्वागत के लिए कितनी उमंग से यह माला गूँथी होगी, लेकिन उसकी तमन्ना अधूरी रह गई... तरुणा का मन बेटी के भोलेपन पर द्रवित हो गया, उसपर बहुत प्यार उमड़ आया। और... उसने नींद में ही बिटिया का सुंदर मुख चूम लिया।